

* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
९३

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
२

श्रीप्रिया-प्रियतम-युगल



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



भाण्डीर-वनमें भगवती श्रीराधा एवं नन्दजीकी गोदमें बालक कृष्ण

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥

कल्याण

यज्जापः सकृदेव गोकुलपतेराकर्षकस्तत्क्षणाद्यत्र प्रेमवतां समस्तपुरुषार्थेषु स्फुरेत्तुच्छता ।
यन्नामाङ्कितमन्त्रजापनपरः प्रीत्या स्वयं माधवः श्रीकृष्णोऽपि तदद्भुतं स्फुरतु मे राधेति वर्णद्वयम् ॥

वर्ष
१३

गोरखपुर, सौर फाल्गुन, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, फरवरी २०१९ ई०

संख्या
२

पूर्ण संख्या ११०७

भाण्डीर-वनमें नन्दजीद्वारा श्रीराधासे प्रार्थना

तत्तेजसा धर्षित आशु नन्दो नत्वाथ तामाह कृताञ्जलिः सन् ।
अयं तु साक्षात्पुरुषोत्तमस्त्वं प्रियास्य मुख्यासि सदैव राधे ॥
गुप्तं त्विदं गर्गमुखेन वेद्मि गृहाण राधे निजनाथमङ्गात् ।
एनं गृहं प्रापय मेघभीतं वदामि चेत्थं प्रकृतेर्गुणाढ्यम् ॥
नमामि तुभ्यं भुवि रक्ष मां त्वं यथेप्सितं सर्वजनैर्दुरापा ।

श्रीराधाके दिव्य तेजसे अभिभूत हो नन्दने तत्काल उनके सामने मस्तक झुकाया और हाथ जोड़कर कहा—
'राधे! ये साक्षात् पुरुषोत्तम हैं और तुम इनकी मुख्य प्राणवल्लभा हो, यह गुप्त रहस्य मैं गर्गजीके मुखसे सुनकर जानता हूँ। राधे! अपने प्राणनाथको मेरे अङ्कसे ले लो। ये बादलोंकी गर्जनासे डर गये हैं। इन्होंने लीलावश यहाँ प्रकृतिके गुणोंको स्वीकार किया है। इसीलिये इनके विषयमें इस प्रकार भयभीत होनेकी बात कह रहा हूँ। देवि! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम इस भूतलपर मेरी यथेष्ट रक्षा करो। तुमने कृपा करके ही मुझे दर्शन दिया है, वास्तवमें तो तुम सब लोगोंके लिये दुर्लभ हो'। [गर्गसंहिता, गोलोकखण्ड १६। ७-९]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर फाल्गुन, वि० सं० २०७५, श्रीकृष्ण-सं० ५२४४, फरवरी २०१९ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- भाण्डीर-वनमें नन्दजीद्वारा श्रीराधासे प्रार्थना.....	३	१४- मितव्ययिताका आदर्श	
२- कल्याण.....	५	(श्रीरमाकान्तजी मिश्र).....	२३
३- 'राधा! हम तुम दोड़ अभिन्न' [आवरणचित्र-परिचय].....	६	१५- प्रयागका कुम्भ एवं अर्धकुम्भ.....	२५
४- माधवका माधुर्य		१६- विलक्षण प्रेम और विलक्षण कृपा	
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका).....	७	(श्रीप्रमोदकुमारजी चट्टोपाध्याय).....	२६
५- भगवान् श्रीकृष्णका दिव्य श्रीविग्रह (श्री जय जय बाबा).....	८	१७- युगलसरकार-प्रार्थना [पद्मपुराण].....	३४
६- श्रीकृष्ण-लीलानुकरण हानिकारक		१८- श्रीराधामाधवके परम त्यागी भक्त गोस्वामी	
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार).....	१०	रघुनाथदास [संत-चरित].....	३५
७- गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य		१९- वृषभानुकिंसोरीकी दिव्य छटा.....	३७
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज).....	१२	२०- 'जिन खोजा तिन पाइयाँ' [कहानी]	
८- रहस्यमयी वार्तामें श्रीराधामाधव		(श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र').....	३८
(ब्रह्मलीन स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज).....	१३	२१- श्रीराधाजीका 'आनन्दचन्द्रिका' नामक स्तोत्र.....	४०
९- शुद्धि और शृंगार (साधुवेषमें एक पथिक).....	१५	२२- गोचरभूमिकी गौरव-गाथा (श्रीगौरीशंकरजी गुप्त).....	४१
१०- सच्चिदानन्दमयी योगशक्ति-श्रीराधा		२३- वृन्दावनका श्रीराधारमणलाल मंदिर	
(डॉ० श्रीकृष्णवल्लभजी दवे).....	१६	(डॉ० श्रीभागवतकृष्णजी नांगिया).....	४३
११- दारुब्रह्म (भगवान् जगन्नाथ)-का प्राकट्य-रहस्य.....	१७	२४- साधनोपयोगी पत्र.....	४४
१२- राधाजीद्वारा माधवके अपूर्ण चित्रांकनका रहस्य.....	१९	२५- व्रतोत्सव-पर्व [चैत्रमासके व्रत-पर्व].....	४६
१३- श्रद्धा-विश्वासपूर्वक काशीवासका फल		२६- कृपानुभूति.....	४७
(श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट).....	२०	२७- श्रीराधा-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्.....	५०

चित्र-सूची

१- श्रीप्रिया-प्रियतम-युगल.....	(रंगीन).....	आवरण-पृष्ठ
२- भाण्डीर-वनमें भगवती श्रीराधा एवं नन्दजीकी गोदमें बालक कृष्ण.....	(").....	मुख-पृष्ठ
३- श्रीप्रिया-प्रियतम-युगल.....	(इकरंगा).....	६
४- श्रीमाधवका चित्रांकन करती श्रीराधाजी.....	(").....	१९
५- श्रीराधारमणमन्दिर, वृन्दावनका मुख्य द्वार.....	(").....	४३
६- भगवान् राधारमणका श्रीविग्रह.....	(").....	४३

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥

जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥

जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

एकवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹ २५०

विदेशमें Air Mail }
शुल्क

वार्षिक US\$ 50 (₹ 3000)

पंचवर्षीय US\$ 250 (₹ 15,000)

{ Us Cheque Collection
Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

₹ १२५०

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : www.gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

☎ 09235400242 / 244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क—भुगतानहेतु-gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

‘शिव’

आवरणचित्र-परिचय—

‘राधा! हम तुम दोउ अभिन्न’



एक दिन श्रीराधाजीके प्रेम तथा दैन्यसे सने वचनोंको सुनते ही श्रीश्यामसुन्दरके दोनों नेत्रोंमें प्रेमाश्रु छलक आये। तब वे श्रीराधाजीसे इस प्रकार मधुर पवित्र वचन बोले—

राधा! हम तुम दोउ अभिन्न।

बारि-बीचि, चंद्रमा-चाँदनी सम अभिन्न नित भिन्न॥
नित्य सत्य सर्वदा सर्वथा रहूँ तुम्हारे संग।
आठों पहर संग सँग डोलूँ, भर्यौ रहूँ अँग अँग॥
मो बिनु तुम्हरी कछु न सत्ता तुम बिनु मैं नाचीज।
समुझि न परत रहस्य रंच हूँ को तरुवर, को बीज॥

राधिके! हम तुम दोनों अभिन्न हैं। जल-तरंग और चन्द्र-ज्योत्स्नाके समान नित्य भिन्न दीखते हुए भी अभिन्न हैं। मैं नित्य सत्यरूपसे ही सर्वदा सर्वथा तुम्हारे साथ रहता हूँ, आठों पहर ही तुम्हारे साथ-साथ फिरता हूँ, इतना ही नहीं, तुम्हारे अंग-अंगमें भरा रहता हूँ—समाया रहता हूँ। मेरे बिना तुम्हारी कुछ भी सत्ता नहीं है और तुम्हारे बिना मैं भी कोई वस्तु नहीं हूँ। यह रहस्य तनिक भी समझमें नहीं आता कि हम दोनोंमें कौन वृक्ष है और कौन बीज?

बिरह-मिलन दोउ रस हम दोउन के हैं लीला-साज।
एक नित्य रस बिबिध रूप धरि क्रीड़त सहित समाज॥

नित्य सत्य सत्ता तुम बिनु मैं नाचीज।
समुझि न परत रहस्य रंच हूँ को तरुवर, को बीज॥

नित अनादि, आरंभ न कबहूँ, कबहूँ न उपसंहार॥
बिछुरन-मिलन तुम्हारौ मेरौ, नित्य मिलन के माँहि।
जा बिछुरनमें मिलन मनोहर, सो तो बिछुरन नाहि॥

विरह (विप्रलम्भ) और मिलन (सम्भोग) दोनों ही रस हम दोनोंकी लीलाके ही उपकरण हैं। वस्तुतः एक ही नित्यरस विविध रूप धारण करके लीलासमाजके साथ क्रीड़ा कर रहा है। नित्य एक ही रसतत्त्व नित्य अनेक सजकर विचित्र विहार कर रहा है। यह नित्य विहार अनादि है, इसका न कभी आरम्भ है और न कभी उपसंहार। तुम्हारा और मेरा यह बिछुड़ना-मिलना नित्य मिलनके ही अन्तर्गत है। जिस बिछुड़नेमें मनोहर मिलन होता है, वह बिछुड़ना नहीं है।

मेरे रस तें तुम रसमयि, मैं तुम्हरे रस रसवान।
एक स्व-रस कौं द्विविध भेद तें करै नित्य हम पान॥
रस, रसपान, रसिक, रसदाता—एक परम रसरूप।
परमाश्चर्य, अचिंत्य अनिर्वचनीय अगम्य अनुप॥
कबहूँ न कतहूँ तुम्हारौ-मेरौ पलक बिछोह-बियोग।
नित्य सत्य अनिवार्य अलौकिक अविच्छेद्य संयोग॥
प्रिये! न तोहि स्वरूपकी विस्मृति नहीं कबहूँ कछु खेद।
एक परम रस सरिताके ही वे तरंगमय भेद॥

मेरे रससे तुम रसमयी हो और तुम्हारे रससे मैं रसवान् हूँ। (तुम्हारा-मेरा एक ही रस है) एक ही अपने ही रसको दो प्रकारके भेदोंसे हम दोनों नित्य पान करते हैं। यह रस, रसपान, रसिक, रसदाता—सब एक ही परम रसरूप हैं और वह परमाश्चर्यमय, अचिन्त्य, अनिर्वचनीय, अगम्य और अनुपम रस है। तुम्हारा और मेरा कभी कहीं पलभर भी बिछोह या वियोग नहीं है। हमारा यह नित्य, सत्य, अनिवार्य, अप्राकृतिक तथा अटूट संयोग है। प्रियतमे! न तो तुम्हें कभी स्वरूपकी विस्मृति है, न कभी कुछ खेद ही है। ये तो एक ही परम रस-सरिताके तरंगमय भेद हैं।

दोनों आप्यायित भये, मिले दिव्य रस-रीति।
महाभाव रसराज की अतुल अकल यह प्रीति॥

तदनन्तर दोनों ही (श्रीराधा-माधव) आप्यायित होकर दिव्य रसकी रीतिके अनुसार मिले। महाभाव (श्रीराधा) और रसराज (श्रीश्यामसुन्दर) की यह प्रीति

नित्य सत्य सत्ता तुम बिनु मैं नाचीज।
समुझि न परत रहस्य रंच हूँ को तरुवर, को बीज॥

माधवका माधुर्य

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

खंजन नैन रूप रस माते।

अतिसय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते ॥

चलि चलि जात निकट स्रवननि के, उलटि पलटि ताटंक फँदाते ।

‘सूरदास’ अंजन गुन अटके, नतरु अबहिं उड़ जाते ॥

श्रीसूरदासजीके इस पदका अर्थ तीन प्रकारसे किया जा सकता है—एक तो यह कि मानो श्रीराधिकाजी भगवान् श्रीकृष्णके रूपको देख-देखकर उन्मत्त हो रही हैं, उस समय राधिकाजीके नेत्रोंकी क्या दशा है—उसका वर्णन सुरदासजी करते हैं।

दूसरा यह कि मानो श्रीकृष्णभगवान् श्रीराधिकाजीके रूपको देख रहे हैं, उस समयके उनके नेत्रोंकी शोभाका वर्णन है।

तीसरा यह कि सूरदासजी स्वयं भगवान्‌के दर्शन करते हुए अपने नेत्रोंकी वक्तिका वर्णन करते हैं।

परन्तु तीनोंमेंसे पहला अर्थ मानना ही अधिक अनुकूल प्रतीत होता है। वास्तवमें क्या बात है—यह तो भगवान् जानें। पूर्वापरके पद सामने रहें तो अनुमान करनेमें अधिक सहायता मिल सकती है।

पदका शब्दार्थ इस प्रकार किया जा सकता है—
‘अहो! श्रीराधिकाजीके नेत्ररूपी खंजन पक्षी भगवान् श्रीकृष्णके रूप-रसको पी-पीकर मतवाले हो रहे हैं; ये बड़े सुन्दर और चपल हैं, अतः पलकरूप पिंजरेमें नहीं समाते हैं। अर्थात् उस समय नेत्रोंकी पलकें पड़नी बन्द हो गयी हैं। ये इधर-उधर उछलते हुए मानो कानोंके पास जा रहे हैं। यदि इनके अंजनका पट लगा हुआ नहीं होता तो सम्भव है, ये अवश्य उड़ जाते। यानी श्रीकृष्णके स्वरूपमें जा मिलते।’

भगवान् श्यामसुन्दरकी मोहिनी छबिके आगे नेत्रोंकी पलक गिरती नहीं, बल्कि आँखें उनके स्वरूपका पान करती ही रहती हैं। भावकी बात है। विशुद्ध और उच्चकोटिकी श्रद्धा तथा प्रेम हो तो उपर्युक्त बातें घट सकती हैं। श्रीराधिकाजी भगवान्की उच्चकोटिकी प्रेमिका हैं। ये भगवान्की आह्लादिनी शक्ति हैं। भगवान्को हरदम प्रसन्न रखना ही इनका काम है। भगवान्का रासलीलामें

जो नृत्य, गान, वंशीवादन आदि होता था, वह सब भी वैसे ही श्रीराधिकाजी एवं गोपियोंको सुख पहुँचानेके लिये, उनका प्रेम बढ़ानेके लिये ही होता था।

श्रीराधिकाजी एवं रासलीलाका विषय अत्यन्त रहस्यमय है। हमलोगोंकी साधारण बुद्धिके द्वारा इसका समझमें आना अत्यन्त कठिन है। भगवान्की दयासे तो मनुष्य भले ही समझ जाय, पर है यह बुद्धिकी समझसे परेकी बात। भगवान्की आह्लादिनी शक्ति होनेके कारण श्रीराधिकाजीको भगवान्का स्वरूप ही मानना चाहिये, उन्हें जीव नहीं मानना चाहिये। श्रीकृष्णकी रासलीला बिलकुल विशुद्ध है। इस रासलीलाके प्रति विशुद्ध प्रेमभाव हो तो भगवान्से शीघ्र प्रेम हो सकता है एवं कामभाव यदि कहीं छिपा हुआ हो तो वह भी भगवान् श्रीकृष्णके प्रभावसे नष्ट हो सकता है।

अतएव भगवान्‌में विशुद्ध प्रेम करनेके लिये प्राणपर्यन्त चेष्टा करनी चाहिये। भगवान्‌ श्रीकृष्णकी मनमोहिनी मूर्तिको सब जगह देखते हुए काम करे। जैसे पतिव्रता स्त्री अपने पतिकी ओर देखती हुई पतिके इच्छानुसार सब काम करती है, उसी भाँति उन भगवान्‌ श्रीकृष्णचन्द्र मोरमुकुटधारी, वंशीवटविहारीकी माधुरी मूर्तिको अपने नेत्रोंके सामने देखता हुआ काम करता रहे। जहाँ-जहाँ नेत्र जायँ वहाँ-वहाँ ही श्रीवासुदेव श्यामसुन्दरकी मूर्तिका चिन्तन करते हुए, मनको भगवान्‌में रखते हुए सांसारिक काम करता रहे। इससे साधन परिपक्व हो जाता है। उसे एक श्रीकृष्ण भगवान्‌के सिवा और कुछ नहीं भासता और वह आनन्दमें ऐसा मगन हो जाता है कि उसे आगे जाकर अपने शरीरका भी भान नहीं रहता। वह गोपियोंकी भाँति मुग्ध हो जाता है। भगवान्‌ बड़े प्रेमी हैं। जो ऐसे भगवान्‌की मित्रता छोड़कर सांसारिक तुच्छ स्त्री और अपने शरीरका दास होकर उनमें प्रेम करता है, वही पशु है। जो भी कुछ सांसारिक वस्तुएँ देखनेमें आती हैं, सब नाशवान्‌ हैं, ऐसा जानकर इनसे प्रेम छोड़कर सत्यस्वरूप भगवान्‌से ही प्रेम करना चाहिये। क्योंकि भगवान्‌ तो केवल प्रेम ही चाहते हैं।

तत्रैवान्तरधीयत ॥ (श्रीमद्भा० १०।२९।४७-४८)

श्रीकृष्ण-लीलानुकरण हानिकारक

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसाद पोद्दार)

जो लोग श्रीकृष्णका स्वाँग सजकर गोपीभावसे स्त्रियोंसे पूजा कराते हैं, मेरी तुच्छ समझसे वे बड़ी भारी भूल करते हैं। यह सत्य है कि यह सारा जगत् परमात्माकी अभिव्यक्ति है, इसके निमित्तोपादान कारण परमात्मा ही होनेसे यह परमात्मस्वरूप ही है और इस दृष्टिसे देवता, मनुष्य, पशु-पक्षी, कीट-पतंग—सभीको परमात्माका स्वरूप समझना आवश्यक है; परंतु परमात्माका यह पूर्ण रूप नहीं है। यह तो अंशमात्र है। यद्यपि सब कुछ परमात्मा है, किंतु परमात्मा यह ‘सब कुछ’ ही नहीं है—परमात्मा इस ‘सब कुछ’ से परे अनन्त है और वह अनन्त परमात्मा श्रीकृष्णका ही स्वरूप है, इससे श्रीकृष्णसे ही सबमें व्याप्त हैं—यह ठीक ही है।

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।

(गीता ९।४)

भगवान् श्रीकृष्णने कहा ही है—‘मेरी अव्यक्त मूर्तिसे (परमात्मा विभुसे) सारा जगत् व्याप्त है।’ परंतु यही (जगत् ही) श्रीकृष्ण नहीं है। अतएव श्रीकृष्णका स्वाँग रासलीलाके खेलमें चाहे आ सकता है; परंतु कोई मनुष्य वस्तुतः श्रीकृष्ण बनकर लोगोंसे अपनेको पुजवाये, यह तो बहुत ही अनुचित है और पूजनेवाले भी बड़ी भूल करते हैं। माना कि स्त्रियाँ श्रद्धालु हैं, भले घरोंकी हैं और शुद्ध भावसे ही ऐसा करती हैं; परंतु यह क्रिया वास्तवमें आदर्शके विरुद्ध और हानिकारक है। यह भी माना कि महात्मा निर्विकार हैं; परंतु उनका भी आदर्श तो बिगड़ता ही है और यदि वे साधक हैं तो इस निर्विकारताका बहुत दिनोंतक टिकना भगवान्की असीम कृपासे ही सम्भव है। ऐसी स्थितिमें जो लोग शुद्ध भावसे इस कार्यका प्रतिवाद करते हैं, वे न तो कोई दोष करते हैं और न अनुचित ही करते हैं। मेरी समझसे यदि उनका भाव द्वेषरहित और शुद्ध है तो वे पापके भागी नहीं होते।

श्रीकृष्ण मेरी समझसे महापुरुष या सिद्ध महात्मा ही नहीं हैं; वे साक्षात् परब्रह्म, पूर्णब्रह्म सनातन पुरुषात्म

स्वयं भगवान् हैं। उनका शरीर पांचभौतिक—मायिक नहीं है, वे नित्य सच्चिदानन्द-विग्रह हैं और गोपीजन भी दिव्यशरीरयुक्ता साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णकी स्वरूपभूता ह्लादिनी शक्तिकी घनीभूत दिव्य मूर्तियाँ हैं। पद्मपुराणमें श्रीगोपीजनके सम्बन्धमें कहा गया है—

गोप्यस्तु श्रुतयो ज्ञेया ऋषिजा देवकन्यकाः।

.....**राजेन्द्र न मानुष्यः कदाचन॥**

‘गोपियोंको श्रुतियाँ, ऋषियोंका अवतार, देवकन्या और गोपकन्या जानना चाहिये। वे मनुष्य कभी नहीं हैं।’

अखिलरससागर रसराजशिरोमणि जगत्पति श्रीभगवान्की प्रेयसी इन महाभाग्यवती दिव्यविग्रहधारिणी गोपियोंमें कुछ तो ‘नित्यसिद्धा’ हैं, जो अनादिकालसे भगवान् श्रीकृष्णके साथ दिव्य लीला-विलास करती हैं। कुछ पूर्वजन्ममें श्रुतियोंकी अधिष्ठात्री देवता हैं, जो ‘श्रुतिपूर्वा’ कहलाती हैं; कुछ दण्डकारण्यके सिद्ध ऋषि हैं, जो ‘ऋषिपूर्वा’ के नामसे ख्यात हैं और कुछ स्वर्गमें रहनेवाली देवकन्याएँ हैं, जो ‘देवीपूर्वा’ कहलाती हैं। पिछले तीनों वर्गोंकी गोपिकाएँ ‘साधनसिद्धा’ हैं। नित्य-सिद्धा गोपीजनोंमें श्रीराधाजी मुख्य हैं और चन्द्रावलीजी, ललिताजी, विशाखाजी आदि उन्हींकी कायव्यूहरूपा हैं; ये ‘गोपकन्या’ कहलाती हैं। साधनसिद्धा गोपियाँ पूर्वजन्ममें श्रीकृष्ण-सेवा-लालसासे साधनसम्पन्न होकर इस जन्ममें गोपीगृहोंमें अवतीर्ण हुई थीं और नित्यसिद्धा गोपीजनोंके सत्संग, सहयोग और सेवनसे दिव्यरूपताको पाकर इन्होंने श्रीकृष्णका दिव्य चरण-सेवाधिकार प्राप्त किया था। न तो ये गोपियाँ परस्त्रियाँ थीं और न अखिल विश्वब्रह्माण्डके स्वामी, आत्माओंके आत्मा भगवान् श्रीकृष्ण ही परपुरुष या उपपति थे। प्रेम-रसास्वादनके लिये—प्रेममार्गके साधनकी अत्युच्च भूमिकाके शिखरपर महात्माओंको भगवत्कृपासे जो सिद्धिरूपा चरमानुभूति होती है, उसी अतुलनीय दिव्य प्रेमका वितरण करनेके लिये जगत्पति न उपपति का और उनका नित्यसंगिनी

शरीरसे तो अनुकरण कोई भी नहीं कर सकते। परंतु भावसे भी, जिनमें तनिक भी निजेन्द्रिय-तृप्तिकी वासना है, जो पवित्र और परम वैराग्यकी स्वच्छ भूमिकापर नहीं पहुँच गये हैं, वे पुरुष या स्त्री यदि श्रीगोपी-गोपीनाथकी लीलाओंका अनुकरण करना चाहेंगे तो उनकी वही दशा होगी, जो सुन्दर फूलोंके हारके भरोसे अत्यन्त विषधर नागको गलेमें पहननेवालोंकी होती है। पांचभौतिक देहधारी स्त्री-पुरुषको तो श्रीकृष्णकी लीलाकी तुलना अपने कार्योंसे करनी ही नहीं चाहिये।

गोपी-प्रेमका वैशिष्ट्य

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

एक भाई गोपी-प्रेमकी बात पूछ रहा था। इसलिये कहना है कि जबतक प्राणीका शरीर और संसारसे सम्बन्ध नहीं छूटता, जबतक वह शरीरको मैं और संसारको अपना मानता है, तबतक गोपी-प्रेमकी बात समझमें नहीं आती। प्रेमीमें चाह नहीं रहती इसलिये प्रेमी अपने लिये कुछ नहीं करता, जो कुछ करता है वह अपने प्रियतमको रस देनेके लिये ही करता है। यहाँ तर्कशील मनुष्य यह प्रश्न कर सकता है कि भगवान् तो सब प्रकारसे पूर्ण और रसमय आनन्दस्वरूप हैं। उनमें किसी प्रकारका अभाव ही नहीं है। उनको रस देनेकी बात कैसी? उसको समझना चाहिये कि यही तो प्रेमकी महिमा है, जो आप्तकाममें भी कामना उत्पन्न कर देता है, सर्वथा पूर्णमें भी अभावका अनुभव करा देता है। प्रेमियोंका भगवान् सर्वथा निर्विशेष नहीं होता। उनका भगवान् तो अनन्त दिव्य गुणोंसे सम्पन्न होता है और उनका अपना प्रियतम होता है। उनकी दृष्टिमें भगवान्के ऐश्वर्यका भी महत्त्व नहीं है। उनका भगवान् तो एकमात्र प्रेममय और प्रेमका ग्राहक है।

प्रेमी भगवान्को रस देनेके लिये ही अपना जीवन सुन्दर बनाते हैं, जैसे सुन्दर पुष्पको खिला हुआ देखकर वाटिकाका स्वामी उस फूलसे प्रेम करता है, उसको हाथमें लेता है, सूँघता है, उसकी शोभाको देखकर प्रसन्न होता है; वैसे ही भगवान् भी अपने प्रेमीको चाहरहित सुन्दर जीवन्मुक्त देखकर प्रसन्न होते हैं, उनको उससे रस मिलता है।

पुष्प तो जड़ होता है, इस कारण स्वयं मालीसे प्रेम नहीं करता। जैसे धनसे मनुष्य प्रेम करता है, परन्तु धन जड़ होनेके कारण मनुष्यसे प्रेम नहीं करता। जीव जड़ नहीं है, चेतन है; इसलिये यह भी अपने प्रियतमसे प्रेम करता है अर्थात् भक्त भगवान्से प्रेम करता है और भगवान् भक्तसे प्रेम करते हैं। भगवान् भक्तके प्रियतम और भक्त भगवान्का प्रियतम हो जाता है।

भगवान् श्रीकृष्ण और किशोरीजीकी प्रेमलीलासे यह बात स्पष्ट समझमें आ जाती है। उनकी लीला अपने भक्तोंको प्रेमका तत्त्व समझाने और रस प्रदान करनेके लिये ही हुआ करती है। एक समय श्यामसुन्दरके मनमें किशोरीजीको प्रेमरस प्रदान करनेके लिये उनकी परीक्षाकी लीला करनेका संकल्प हुआ, तो आपने एक देवांगनाका रूप धारण किया और किशोरीजीके पास गये। बातचीतके प्रसंगमें श्यामसुन्दरने कहा—‘किशोरीजी! आप श्याम-सुन्दरसे इतना प्रेम क्यों करती हैं? वे तो आपसे प्रेम नहीं करते।’ तब किशोरीजीने कहा—‘तुम इस बातको क्या समझो! प्रेम करना तो श्यामसुन्दर ही जानते हैं। वे ही प्रेम करते हैं। मुझमें प्रेम कहाँ है?’ देवांगना बोली—‘नहीं-नहीं, वे तो प्रेम नहीं करते, तुम्हीं प्रेम करती हो।’ तब किशोरीजीने कहा—‘देवी! प्रेम करना जैसा श्यामसुन्दर जानते हैं, वे जितना और जैसा प्रेम करते हैं, वैसा कोई नहीं कर सकता।’ तब देवांगना बोली—‘मैं तो यह नहीं मान सकती।’ किशोरीजीने कहा—‘तुमको कैसे विश्वास हो?’ देवांगना बोली—‘यदि वे आपके बुलानेसे आ जायँ तो मैं समझूँ कि सचमुच वे भी आपसे प्रेम करते हैं।’ किशोरीजीने कहा—‘यह तो तब हो सकता है जबकि कुछ समयतक तुम मेरी सखी बनकर यहाँ रहो।’ देवांगनाने किशोरीजीकी बात स्वीकार की और उनकी सखी बनकर रहने लगी। तब किशोरीजीने भावमें प्रविष्ट होकर भगवान्से कहा—‘प्यारे! तुम कहाँ हो?’ इतना कहते ही देवांगनासे भगवान् श्यामसुन्दर हो गये। उनको देखकर किशोरीजीने कहा—‘ललिते! वह देवांगना कहाँ है? उसे बुलाकर प्यारेका दर्शन कराओ।’ तब ललिता बोली—‘प्यारी! उसीमेंसे यह देव प्रकट हुए हैं, वह अब कहाँ है।’ ललिता विवेक-शक्तिका अवतार है, यह भक्त और भगवान्को मिलाती रहती है। इस लीलासे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि भक्त भगवान्से प्रेम करता है और भगवान् भक्तसे प्रेम करते हैं।

रहस्यमयी वार्तामें श्रीराधामाधव

(ब्रह्मलीन स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

प्रश्न—भगवान् श्रीकृष्ण मोर-मुकुट धारण क्यों करते हैं ?

उत्तर—मोर श्रीजीको बहुत प्रिय था और उनका केलीमृग (खेलनेका पशु) था। श्रीजीके प्रेमके कारण भगवान्ने मोरपंख धारण किया।

प्रश्न—भगवान्ने गोपियोंसे कहा कि मैं तुम्हारा ऋण जन्मभर उतार नहीं सकता, तो भगवान्पर गोपियोंका क्या ऋण था ?

उत्तर—गोपियोंने अपने-आपको भगवान्को समर्पित कर दिया था। भगवान्की तो कई गोपियाँ थीं, पर गोपियोंके एक भगवान् ही थे।

प्रश्न—भगवान् प्रेमके लिये स्त्री (राधा) और पुरुष (कृष्ण)-रूपसे क्यों हुए ?

उत्तर—संसारमें स्त्री और पुरुषके बीच विशेष आकर्षण होता है, इसलिये संसारी लोगोंको समझानेके लिये भगवान्ने स्त्री-पुरुषरूप धारण किया। जैसे प्रेममें 'परकीया' की बात परकीयाका भाव लेनेके लिये कही गयी है, ऐसे ही स्त्री-पुरुषका रूप भी स्त्री-पुरुषका भाव लेनेके लिये धारण किया गया है।

प्रश्न—मुक्त होनेके बाद जो प्रेम होता है, उसमें प्रेमी तथा प्रेमास्पद दोनों बराबर होते हैं; अतः वहाँ माधुर्यभाव होता है। फिर वहाँ दास्य, सख्य, वात्सल्य आदि भाव कैसे होंगे ?

उत्तर—माधुर्यभावमें सभी भाव आ जाते हैं; जैसे—स्त्रीमें सभी भाव होते हैं, पत्नी माताका कार्य भी करती है और दासीका काम भी।

सख्य आदि सभी भाव प्रतिक्षण वर्धमान प्रेममें ही होते हैं। मुक्तिसे पहले भी ये भाव हो सकते हैं, पर वे दूसरी सत्ताको लेकर होते हैं। मुक्तिके बाद एक सत्ता रहती है। दोनों ही प्रेमी और दोनों ही प्रेमास्पद होते हैं। सभी भाव दोनों तरफ होते हैं। अतः कभी कृष्ण राधा बन जाते हैं, कभी राधा कृष्ण बन जाती हैं। कभी राधा सेवक बन जाती हैं, कभी कृष्ण सेवक बन जाते हैं—

'देख्यों दुर्यौ वह कुंज-कुटीरमें बैठ्यो पलोटत राधिका-पायन।'

प्रश्न—रासलीला क्या है ?

उत्तर—रास है—रसका समूह, रसबाहुल्य अर्थात् प्रतिक्षण वर्धमान रस। सांसारिक सुखका तो हास होता है और अपना पतन तथा भोग्य वस्तुका नाश होता है, पर प्रेममें ऐसा नहीं है। प्रेममें हास अथवा नाश नहीं होता, प्रत्युत वृद्धि होती है। उस वृद्धिका नाम 'रास' है। प्यास बुझती नहीं, पेट भरता नहीं, जल घटता नहीं।

प्रश्न—रासलीलाकी रात्रिको 'ब्रह्मरात्रि' क्यों कहा है ?—**'ब्रह्मरात्र उपावृत्ते०'** (श्रीमद्भा० १०। ३३। ३९)

स्वामीजी—परमात्मस्वरूप होनेसे ही उसको 'ब्रह्मरात्रि' कहा है। वैष्णवलोग भगवान्के सम्बन्धको 'ब्रह्मसम्बन्ध' और भगवान्के उत्सवको 'ब्रह्मोत्सव' कहते हैं।

रामजीके जन्मके समय छः महीनेका दिन रहा था; क्योंकि सूर्य कहीं रुक गया। ऐसे ही रासलीलाके समय छः महीनेकी रात रही थी।

प्रश्न—गीताप्रेससे प्रकाशित एक स्तोत्र है—'भगवान् श्रीकृष्णकी कृपा तथा दिव्यप्रेमकी प्राप्तिके लिये।' आपसे सुना है कि प्रेमकी प्राप्ति भगवान्में अपनापन होनेसे होती है, किसी साधन, तपस्या आदिसे नहीं, फिर उपर्युक्त स्तोत्रका पाठ करनेसे प्रेमकी प्राप्ति कैसे ?

उत्तर—जिस संकल्पसे स्तोत्र लिखा गया है, उसीके अनुसार प्रभाव होता है। जिस उद्देश्यसे कार्य किया जाता है, उसीकी सिद्धि होती है। जैसे—मन्त्र पढ़नेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है; क्योंकि जहर उतारनेके उद्देश्य (संकल्प) से ही उस मन्त्रकी रचना की गयी। ऐसे ही यह स्तोत्र प्रेम-प्राप्तिके उद्देश्यसे बनाया गया है। अतः स्तोत्रका पाठ करनेसे भगवान्में अपनापन होकर प्रेम हो सकता है।

शुद्धि और शृंगार

(साधुवेषमें एक पथिक)

ऐसा कौन मनुष्य होगा जिसे अपने-आपको शुद्ध रखना और अपना शृंगार करना प्रिय न हो। अपने मैले कपड़े और अपना मैला शरीर सब शुद्ध करते हैं और उन्हीं उजले शुद्ध वस्त्रोंसे शुद्ध देहको सजाते हैं। इतना भेद अवश्य रहता है कि कुछ लोग अपने-आपको ही सन्तुष्ट और तृप्त करनेके लिये अपना शरीर शुद्ध रखते हुए उसका शृंगार करते हैं और कुछ लोग अपने स्नेहपात्रको सन्तुष्ट तथा प्रसन्न रखनेके लिये ही शुद्धिके साथ शृंगारका सदुपयोग समझते हैं।

शुद्धिका अर्थ है—अशुद्ध वस्तुओंका त्याग करना, जो शुद्ध रूपके साथ मिल जाती हैं। विशेषरूपमें शरीरके प्रत्येक अंगको जल-मृत्तिकाद्वारा साफ रखना तो शुद्धि है ही, पर इसके साथ-साथ पंच ज्ञानेन्द्रियोंकी, मन और बुद्धि तथा अहंकी शुद्धि भी अमित आवश्यक है। नेत्रोंसे सदा पवित्र, सुन्दर और सत्त्वगुणी रूपोंको देखना, कानोंसे भगवत्कथा-प्रसंग और सन्तों तथा गुरुजनोंसे ज्ञान-भक्तिकी कल्याणकारी चर्चा सुनना, रसनासे भगवान्की चरित्र-कथा तथा उनके परम पावन नामोंका कीर्तन करना, त्वचासे सदा सद्भाववर्धक पवित्र स्पर्शकी ही अभिलाषा करना—इन्द्रियोंकी शुद्धि है। मनसे विरक्त, ज्ञानी, महात्मा और परमाधार परमात्माको ही अपना मानकर उन्हींका मनन करना मनकी शुद्धि है। इसी प्रकार चित्तसे भगवान्के गुण, ज्ञान और चरित्रका चिन्तन करना चित्तकी शुद्धि है। बुद्धिसे जगत्-प्रपंचकी असारता—असत्यताका अनुभव करते हुए महापुरुषके ज्ञानस्वरूपको जानना और भगवान्—परमानन्द परमात्माका ज्ञान प्राप्त करना बुद्धिकी शुद्धि है। अहंताके साथ

विनाशी देह आदि पदार्थोंका जो संग्रहभ्रमान मिल गया है, उसे छोड़कर अविनाशी परमानन्द परमात्मासे अपने-आपको अभिन्न देखना—परम तत्त्वके साथ एकताका अभिमान दृढ़ करना अहंकी शुद्धि है।

जिस प्रकार सौन्दर्यप्रेमी सज्जन शरीरको शुद्धकर उसका वस्त्राभूषणसे शृंगार करते हैं, उसी प्रकार अन्तरंग जीवनको भी सद्गुणों, सद्भावों और सत्-ज्ञान तथा सदात्माभिमानसे सजाया जाता है। बाह्य शरीरकी शुद्धि तथा शृंगार-सौन्दर्यपर स्थूल दृष्टिवाले रीझते हैं—महत्त्व देते हैं और अन्तःकरणकी शुद्धि तथा शृंगार—सुन्दरतासे प्रेममय भगवान् रीझ जाते हैं। बाह्य सौन्दर्यसे संसारी व्यक्तियोंको रिझाकर परतन्त्र-भोगी बनना पड़ता है; अन्तःकरणकी शुद्धि तथा सद्गुण और सत्-ज्ञानके सौन्दर्यसे भगवान्को रिझानेपर नित्य, स्वतन्त्र और परमानन्द सत्यका योग मिलता है। सांसारिक वस्तुओंको लेकर अभिमान, मोह, ममता, लोभ, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि दोष-दुर्विकारोंका त्याग ही अन्तःकरण—अन्तर्जीवनकी शुद्धि है और इसी प्रकार अपने अन्तःकरण—अन्तर्जीवनमें श्रद्धा, विवेक, संतोष, उदारता, विनम्रता, क्षमा, सहिष्णुता, अटूट प्रसन्नता आदि धारण करना ही सुन्दर शृंगार है।

प्रायः देहको साफ कर लेना तो पशु-पक्षी भी जानते हैं। देहका सुन्दर शृंगार तो वेश्याएँ भी कर लेती हैं और दर्पणमें मुख देखकर सुन्दरताका गर्व करती हैं। अपने अन्तरंग जीवन—ज्ञानेन्द्रियों, मन, चित्त, बुद्धि और अहंकारकी शुद्धि तथा शृंगार विरली सच्ची प्रेमिका ही कर पाती है या भोगोंसे विरक्त भगवान्का विवेकी भक्त ही करता है।

अशुभेषु समाविष्टं शुभेष्वेवावतारयेत्। प्रयत्नाच्चित्तमित्येष सर्वशास्त्रार्थसंग्रहः ॥

यच्छ्रेयो यदतुच्छं च यदपायविवर्जितम्। तत्तदाचर यत्नेन पुत्रेति गुरवः स्थिताः ॥

‘अशुभ कर्मोंमें लगे हुए मनको वहाँसे हटाकर प्रयत्नपूर्वक शुभ कर्मोंमें लगाना चाहिये। यह सब शास्त्रोंके सारका संग्रह है। जो वस्तु कल्याणकारी है, तुच्छ नहीं है तथा जिसका कभी नाश नहीं होता, उसीका यत्नपूर्वक आचरण करना चाहिये। हे वत्स! गुरुजन यही उपदेश देते हैं।’ (योगवासिष्ठ, मुमुक्षु० ७। १२-१३)

सच्चिदानन्दमयी योगशक्ति—श्रीराधा

(डॉ० श्रीकृष्णवल्लभजी दवे)

श्रीराधाजीका जन्म बरसानेमें हुआ था। उनके पिता वृषभानु और माता कीर्ति थीं। बचपनसे ही उनके चेहरेपर असाधारण ओजस्विताकी दमक अहर्निश छायी रहती थी—अतिविचित्र जो थीं वे, मानो सच्चिदानन्दमयी योगशक्तिका साक्षात् अवतार।

कहा जाता है कि जब वे मात्र छः वर्षकी थीं, तभी उनकी माँका देहान्त हो गया था। फलतः उनके पिता ने उन्हें नानीके घर भेज दिया और स्वयं बरसाना छोड़कर अपनी दूसरी पत्नी कपिलाके साथ रहने वृन्दावन चले गये किंतु कुछ ही वर्षों बाद जब उनकी नानीमाँका भी देहांत हो गया तो पिताने उन्हें अपने पास वृन्दावन बुलवा लिया। इन परिस्थितियोंमें वृन्दावन जाते समय गोकुलके गोपीनाथ महादेव मन्दिरके मार्गपर उनकी श्रीकृष्णचन्द्रसे भेंट हुई। तब वे बारह वर्षकी थीं और श्रीकृष्ण सात वर्षके। अपनी इसी प्रथम भेंटमें वृन्दावनका 'कन्हैया' राधाजीके लिये मात्र 'कान्हा' होकर रह गया था।

श्रीकृष्ण जब पाँच वर्षके थे तभी गोकुल से वृन्दावन आ गये थे। वृन्दावनमें उनके पराक्रमोंकी अत्यधिक ख्याति रही। उनकी बाललीलाके प्रसंगने तो सर्वत्र अपना अनूठा रंग जमा लिया। जैसे मात्र छः वर्षकी आयुमें गोपांगनाओंके चीरहरणकी लीला, सात वर्षकी आयुमें देवराज इन्द्रके गर्वहरणकी गोवर्धनलीला एवं वेणुलीला आदि।

यों श्रीकृष्णके वृन्दावन आनेपर राधाजीका मन श्रीकृष्णसंगके कारण आनन्दमग्न हो चुका था। ललिता, आदि अनेक सखियोंका संग भी उन्हें प्राप्त था। फिर क्या था? आनन-फाननमें लीलाओंका दौर चल पड़ा—जैसे श्रीकृष्णका सखियोंके संग खूब हिल-मिलकर खेलना, मिल-जुलकर झूले झूलना, पुष्पमालाओंसे सजना, संग-संग विचरण करना। ऐसेमें राधाजीकी छविका तो कहना ही क्या? एकदम निराली अनुपम अपूर्व; यथा श्रीकृष्णके कंधोंपर हाथ रखकर हौले-हौले चलते समय कदमोंका

सहज ही थिरकने लगना, आँखमिचौली करना—सखियाँ इन सबमें उनके साथ थीं।

नेहकी डोर दृढ़से दृढ़तर हुई। पावन प्रणय मग्न हुआ, सखाधर्म सुदृढ़ हुआ। सहज भाव प्रबल हुआ। ऐसेमें फिर श्रीकृष्ण, श्रीवेणुका तो कहना ही क्या? राधा अब करें तो क्या करें? देवकी दिव्यतासे कैसे विलग रहें! अन्ततः उन्हें दिव्य महारासमें सम्मिलित होना ही पड़ा। श्रीकृष्णकी वेणुके संग नृत्य, ताल एवं लयमें लीन होकर, उल्लासमें सराबोर होकर, कृष्णमय होकर, परिपूर्ण होकर। भवसागर जहाँ भावसागर बन जाता है और फिर महाभावसागरका रूप ले लेता है, वैसे ही राधाके लिये कृष्णसुख ही स्वसुख हो गया। राधाकी सारी चेष्टाएँ श्रीकृष्णको समर्पित हो गयीं। इधर श्रीकृष्णकी चेष्टाएँ भी राधाजीको समर्पित हो गयीं।

राधा माधवके संग उन्हींमें समायी रहतीं। एक दूजेके लिये एक दूजेके संग। राधा-माधवकी यह छवि देशके जन-जनके हृदय-पटलमें चिरकालसे अंकित है। राधाजी श्रीकृष्णकी परम आराधिकाके रूपमें अभिमण्डित होती रही हैं। श्रीकृष्ण ही उनके परम आराध्य हैं। वे कृष्णकी साक्षात् आत्मा हैं, अभिन्नरूपा हैं, दिव्य आनन्दमयी शक्ति हैं, मूलप्रकृति हैं, परमप्रिया हैं—फिर उस वियोगिनीकी गाथा जो स्वयंकी निजताको दावपर लगाकर, क्षण-क्षण निःशेष होकर, पल-पल मिटकर-तपकर सच्चिदानन्दमय योगशक्तिका रूप धारण किये सनातन-कालसे श्रीकृष्णकी चिरसंगिनीके रूपमें, अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं। यही स्वरूप उनकी अनन्तताका एहसास कराता है। यही अवधारणा उनके सामर्थ्यको उजागर कर देती है। यही कारण है कि यहाँ श्रीराधाको सच्चिदानन्दमयी योगशक्तिका अवतार कहा गया है।

श्रीराधामाधव चरण बन्दों बारम्बार।

एक तत्त्व दोउ तन धरे नितरस पारावार॥

दारुब्रह्म (भगवान् जगन्नाथ)-का प्राकट्य-रहस्य

[एक मधुर प्रसंग]

एक समय श्रीधाम द्वारकामें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र रात्रिकालमें श्रीरुक्मिणी, सत्यभामा प्रभृति प्रधान अष्ट-राजमहिषियोंके मध्य शयन कर रहे थे। स्वप्नावस्थामें आप अकस्मात् 'हा राधे! हा राधे!' उच्चारण करते हुए क्रन्दन करने लगे। जब अन्य किसी प्रकार प्रभुका क्रन्दन नहीं रुका, तब बाध्य होकर महारानी श्रीरुक्मिणीदेवीने अपने प्राणवल्लभको चरणसंवाहनपूर्वक जाग्रत् किया। भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र निद्राभंग होनेपर किंचित् लज्जित हुए और उन्होंने अति चतुराईसे अपना भाव गोपन कर लिया और पुनः निद्रित हो गये; परंतु इसका रहस्य जाननेके लिये महारानियोंके हृदयमें अत्यन्त व्यग्रता उत्पन्न हुई। सब परस्पर कहने लगीं 'देखो, हम सब मिलकर सोलह सहस्र एक सौ आठ महिषियाँ हैं और कुल, शील, रूप एवं गुणमें कोई भी अन्य किसी रमणीसे न्यून नहीं है; तथापि हमारे प्राणवल्लभ किसी अन्य रमणीके लिये इतने व्याकुल हैं, यह तो बड़े ही विस्मयकी बात है! रात्रिमें स्वप्नावस्थामें भी जिस रमणीके लिये प्रभु इतने व्याकुल होते हैं, वह रमणी भी न जाने कितनी रूप-गुणवती होगी!' इसपर श्रीरुक्मिणीदेवी कहने लगीं, 'हमने सुना है कि वृन्दावनमें राधानाम्नी एक गोपकुमारी है, उसके प्रति हमारे प्राणेश्वर अत्यन्त आकृष्ट हैं; इसीलिये रूप-लावण्य-वैदग्ध्य-पुंज नयनाभिराम श्रीप्राणनाथ हम सबके द्वारा परिसेवित होकर भी उस सर्वचिन्ताकर्षक-चिन्ताकर्षिणीके अलौकिक गुणग्राम भूल नहीं सके हैं।' श्रीसत्यभामादेवी कहने लगीं, 'सब ठीक ही है, तो भी वह एक गोपकन्याके सिवा तो कुछ नहीं; फिर उसके प्रति हमारे प्राणकान्त इतने आसक्त क्यों हैं? अस्तु, जो कुछ भी क्यों न हो, हमारी सम्मतिमें तो इस सम्बन्धमें रोहिणीमाताको पूछनेपर ही इसका ठीक-ठीक पता लग सकेगा; क्योंकि उन्होंने स्वयं वृन्दावनमें वास किया है और उस समयकी सम्पूर्ण घटनाओंको वे भलीभाँति जानती हैं।' यह प्रस्ताव सबको रुचा। रात्रि बीती, प्रातःकाल हुआ।

श्रीकृष्णचन्द्र प्रातःकृत्य समापन करके राजसभाको पधारे और यथासमय पुनः अन्तःपुरमें पधारकर स्नानादि करके समाधानपूर्वक भोजन करने बैठे। राजभोग सम्मुख आकर उपस्थित हुए, उद्धवादि सखा-वृन्दसहित प्रभुने भोजन किया और आचमन करके किंचित् विश्रामपूर्वक पुनः राजसभाको गमन किया। इस अवसरको पाकर महारानियोंने श्रीरोहिणीदेवीको पूर्वरात्रिकी घटना सुनाकर उनसे व्रज-वृत्तान्त पूछा। माताजी कहने लगीं, 'प्यारी पुत्रियो! यद्यपि मैं व्रजलीलाकी अधिकांश घटनाएँ जानती हूँ, तथापि माता होकर पुत्रकी गुप्त लीलाओंका रहस्य किस प्रकार कह सकती हूँ? यदि राम-कृष्ण यह कथा सुन लें तो फिर लज्जाकी सीमा न रहेगी।' इसपर महिषीगण कहने लगीं, 'माताजी! जिस किसी प्रकार भी हो सके, हमें व्रजलीलाकी कथा तो आपको अवश्य ही सुनानी होगी।' माताजीने कहा—'तब एक उपाय करो—सुभद्राको द्वारपर पहरके लिये बैठा दो, किसीको अंदर न आने दे; फिर मैं निस्संकोच तुम्हारे निकट व्रजलीलाका वर्णन करूँगी।' माताजीने यह कहकर सुभद्राकी ओर देखा और कहा, 'सुभद्रे! यदि राम-कृष्ण आयें तो उन्हें भी कदापि भीतर मत आने देना।' माताजीका आदेश पालन किया गया। सुभद्रा 'जो आज्ञा' कहकर द्वार-रक्षा करने लगीं। महिषीवृन्द माताजीको चारों ओरसे घेरकर बैठ गयीं और माताजीने सुमधुर व्रजलीला वर्णन करना आरम्भ किया।

इधर राजसभामें राम-कृष्ण दोनों भाई चंचल हो उठे। जब किसी प्रकार भी राजसभामें नहीं ठहर सके, तब उत्कण्ठितचित्त होकर अन्तःपुरकी ओर चल पड़े। आकर देखते हैं कि सुभद्रादेवी द्वारपर खड़ी हैं। उन्होंने सुभद्रादेवीसे पूछा, 'तुम आज यहाँ क्यों खड़ी हो? द्वार छोड़ दो; हमलोग भीतर जायँ।' श्रीमती सुभद्रादेवीने कहा, 'रोहिणी माँने इस समय तुम्हारा अन्तःपुरमें प्रवेश करना निषेध कर रखा है, अतः तुमलोग अभी भीतर नहीं जा सकोगे।' यह सुनकर जब दोनों भाई आश्चर्यान्वित होकर

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

इस निषेधका कारण ढूँढ़ने लगे, तब माताजीकी वह रहस्यपूर्ण व्रजलीलात्मक वार्ता उन्हें सुनायी दी। यह वार्ता श्रीवृन्दावनचन्द्रकी परम कल्याणमय, परमपावन, अद्भुत, मंगलमय रासविहारात्मक थी। सुनते-सुनते दोनों भाइयोंके मंगल श्रीअंगमें अद्भुत प्रेम-विकारके लक्षण दिखायी देने लगे। क्रमशः दोनों ही प्रेमानन्दमें विह्वल हो गये। अविश्रान्त प्रेमाश्रुकी मन्दकिनीधारा प्रवाहित होकर दोनोंके गण्डस्थल एवं वक्षःस्थलको प्लावित करने लगी। यह देखकर श्रीमती सुभद्रादेवी भी एक अनिर्वचनीय महाभाववस्थाको प्राप्त हो गयीं। जिस समय माताजी स्वामिनी श्रीवृन्दावनेश्वरीकी अद्भुत प्रेमवैचित्यावस्थाका वर्णन करने लगीं, उस समय श्रीबलरामजी किसी प्रकार भी धैर्य धारण न कर सके। उनके धैर्यका बाँध टूट गया, श्रीअंगमें इस प्रकार महाभावका प्रकाश हुआ कि उनके श्रीहस्तपद संकुचित होने लगे और जब माताजी निभृत निगूढ़ विलास-वर्णन करने लगीं तब तो श्रीकृष्णचन्द्रकी भी यही अवस्था हुई। दोनों भाइयोंकी यह अद्भुत अवस्था देखकर श्रीमती सुभद्रादेवीकी भी यही अवस्था हुई। तीनों ही मंगलस्वरूप महाभावस्वरूपिणी स्वामिनी श्रीवृन्दावनेश्वरीके अपार महाभावसिन्धुमें निमज्जित होकर ऐसी स्वसंवेद्यावस्थाको प्राप्त हो गये कि वे लोगोंके देखनेमें निश्चल स्थावर प्रतिमूर्तिस्वरूप परिलक्षित होने लगे। निश्चल, निर्वाक्, स्पन्दरहित महाभाववस्था! अतिशय मनोऽभिनिवेशपूर्वक दर्शन करनेपर भी श्रीहस्तपदावयव किंचित् भी परिलक्षित नहीं होते थे। आयुधराज श्रीसुदर्शनने भी विगलित होकर लम्बिताकार धारण कर लिया।

इसी समय स्वच्छन्दगति देवर्षि नारदजी भगवद्दर्शनके अभिप्रायसे श्रीधाम द्वारकामें आ उपस्थित हुए। उन्होंने राजसभामें जाकर सुना कि राम-कृष्ण दोनों भाई अन्तःपुर पधारे हैं। देवर्षिकी सर्वत्र अबाध गति तो है ही; अन्तःपुरके द्वारपर जाकर उन्हें जो अद्भुत दर्शन हुए, उससे देवर्षि स्तम्भित हो गये। इस प्रकारका दर्शन उन्होंने पूर्वमें कभी नहीं किया था। निज प्राणनाथकी ऐसी अद्भुत अवस्थाके कारणका विचार करते हुए प्रेमावेश स्वामी-भावकी प्राप्ति होकर

देवर्षि भी वहीं चुपचाप खड़े रह गये। कुछ ही क्षण पश्चात् जब माताजीने पुनर्वार किसी एक रसान्तरका प्रसंग उठाया, तब उन सबको पूर्ववत् स्वास्थ्यलाभ हुआ। सिद्धान्ततः रसान्तरद्वारा रसापत्तिका विदूरित होना संगत ही है। इसी अवसरपर महाभावविस्मित देवर्षि नारदजीने बहुविध स्तव-स्तुति करना आरम्भ कर दिया। करुणावरुणालय श्रीभगवान् कृष्णचन्द्रने देवर्षिद्वारा स्तुत होकर प्रसन्नतापूर्वक कहा—‘देवर्षे! आज बड़े ही आनन्दका अवसर है। कहिये, मैं आपका क्या प्रीति-सम्पादन करूँ?’ देवर्षिने कर जोड़ प्रार्थना की—‘प्रभो! वर्तमानमें यहाँपर उपस्थित होकर आप सबका जो एक अदृष्टाश्रुतपूर्व महाभाववेश परिलक्षित हुआ है, स्वरूपतः वह क्या पदार्थ है और किस प्रकार उस महावस्थाका प्राकट्य हुआ? कृपया सविशेष उल्लेख करके दासको कृतार्थ कीजिये। सर्वप्रथम तो सेवामें यही एकान्त निवेदन है।’

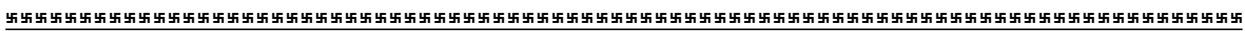
भक्तवत्सल श्रीभगवान् अमन्दहास्यचन्द्रिकापरि-
शोभित सुन्दर श्रीवदन-चन्द्रमासे देवर्षि नारदजीके सर्वात्माको
आप्यायित करते हुए इस प्रकार वचनामृतवर्षण करने
लगे—‘देवर्षे! प्रातः तथा मध्याह्नकृत्य-समापनपूर्वक
जिस समय हम दोनों भाई राजसभामें समासीन थे, उसी
समय महिषीगणके द्वारा पूछे जानेपर माता रोहिणीदेवीने
महाचित्ताकर्षिणी अपार माधुर्यमयी व्रजलीलाकथाकी
अवतारणा की। महामाधुर्यशिखरिणी व्रजलीलावार्ताका
ऐसा प्रभाव है कि हम जहाँ और जिस अवस्थामें भी हों,
हमें वहींसे और उसी अवस्थामें आकर्षण करके वह
कथास्थलपर खींच लाता है। हम दोनों भाई उसी तरह
आकर्षित होकर यहाँ उपस्थित हुए और देखा कि सुभद्रा
द्वारपालिकारूपमें द्वारपर खड़ी हैं। उत्कण्ठावश
अन्तःप्रवेशकाम हम दोनों श्रीसुभद्राद्वारा रोके जानेपर
प्रवेशनिषेधका कारण ढूँढ़ते रहे, उसी समय श्रीमाताजीके
मुखारविन्दविगलित अत्यद्भुत व्रजलीलामाधुरीने कर्णगत
होकर हमारे हृदय विगलित कर दिये। तत्पश्चात् जो
अवस्था हुई, उसका तो आपने प्रत्यक्ष दर्शन किया ही है।
मेरी प्राणेश्वरी महाभावरूपिणी श्रीराधाके महाभावकर्तृक
सम्पूर्ण भावसे प्रेष्ट होनेके कारण हम आपका पथारोमी भ

दारुब्रह्मस्वरूपमें अवतीर्ण होकर जनसाधारणको दर्शन देनेका वर प्रदान कर चुका हूँ तथा महाविद्या-स्वरूपिणी श्रीविमलादेवीद्वारा अनुष्ठित महातपस्यासे प्रसन्न होकर उनकी प्राणिमात्रको बिना विचार किये महाप्रसाद वितरण करनेकी प्रतिज्ञाको उक्त स्वरूपसे ही पूर्ण करनेकी स्वीकृति दे चुका हूँ। अतएव इन तीनों उद्देश्योंकी पूर्तिके लिये हम चारों इसी स्वरूपमें आगामी कलियुगमें लवण-समुद्रतटवर्ती नीलाचल-क्षेत्रमें अवतीर्ण होकर प्रकाशमान रहेंगे।' सर्वजीव-कल्याणव्रत देवर्षि श्रीनारदजीने मनोवांछित वर प्राप्तकर प्रभुचरणारविन्दमें भक्तिपूर्वक प्रणाम किया और मधुर वीणासे करुणावारिधि श्रीप्रभुके अमृतमय नाम-गुणोंकी माधुरीका गान करते-करते यदृच्छागमन किया। श्रीराम-कृष्णने भी माताजीके कथंचित् संकोचकी आशंका करके उस स्थानसे प्रस्थान किया। ये ही मूर्तिचतुष्टय श्रीजगन्नाथजी (श्रीकृष्ण), श्रीबलभद्रजी (श्रीबलराम), श्रीसुभद्राजी एवं सुदर्शनरूपसे श्रीनीलाचल-क्षेत्रको विभूषित करके अद्यापि विराजमान हैं। [व्रजके एक महात्मा]

तन्मय मन, दृग-दृष्टि-अचंचल, उमँग न हृदय समाती ॥

[पद-रत्नाकर]

दूसरे दिन वृद्ध दम्पतीकी कोठरीके बाहर एक अपरूप बालिका आ खड़ी हुई। सीधा बाँटनेवाले सेठके कर्मचारी वहाँसे निकले तो उसने उन्हें पास बुलाया। उनके पास आनेपर बोली—‘देखो भाई! मेरी



बूढ़ी माँ और बाबा कलसे भूखे पड़े हैं। तुम एक रो-रोकर हमसे कह रही थी कि मेरे बूढ़े बाबा और माँ सीधा हमें भी दे जाओ।' भूखे हैं कलसे। उन्हें एक सीधा दे जाओ।'

कर्मचारी बोले—'सीधा हम उन्हीं लोगोंको बाँटते × × ×
हैं, जिनको बाँटनेकी आज्ञा हमारा सेठ देता है। बिना सेठके बहुत कहनेपर वृद्ध दम्पतीने बताया कि आज्ञा हम सीधा नहीं बाँट सकते।' बाबा विश्वनाथ और माँ अन्नपूर्णाको छोड़कर और कोई नहीं जानता कि हम दोनोंने कलसे कुछ नहीं खाया। हमने किसीसे कहा ही नहीं।

वह बालिका आँखोंमें आँसू भरकर बोली—'तो × × ×
क्या होगा बाबा? मेरे बूढ़े माँ-बाबाके पास कुछ नहीं है। मर जायँगे वे बिना भोजनके? अपने सेठसे कहो न जाकर कि मेरे माँ-बाबा भूखे पड़े हैं कलसे।'
माँ अन्नपूर्णा भला अपने भक्तोंको भूखा रहने दे सकती हैं? यह भला हो ही कैसे सकता है—

'अच्छा माँ! हम सेठसे जाकर जरूर कहेंगे।' × × ×
बालिकाकी बात टालनेकी क्षमता मानो उनमें थी 'तुम अन्नपूर्णा माँ रमा हो और हम भूखों मरें?'
ही नहीं। × × ×

सेठसे उसके कर्मचारियोंने जाकर कहा—'सेठजी! सेठका आग्रह स्वीकारकर वृद्ध दम्पतीको उसका सीधा लेना ही पड़ा और तबसे नियमित रूपसे वहाँसे भी सीधा आने लगा।

× × ×
कुछ दिनोंके बाद भतीजेका पत्र आया जिसमें लिखा था—'ताऊजी! आपलोगोंके आशीर्वादसे मुझे पहलेसे भी अच्छी नौकरी मिल गयी है। अब मैं आपको तीस रुपये मासिक भेजा करूँगा। खाना बनानेमें आपको बड़ा कष्ट होता होगा। कोई दाई आदि रख लीजियेगा।'

× × ×
सेठजीके मनमें आ गया—'चलो देखें।' वृद्ध दम्पतीको भतीजेका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। उन्होंने सेठकी कोठीपर जाकर उनसे भेंट की और उनसे अनुरोध किया कि वे अब उनको मिलनेवाला सीधा किसी अन्य व्यक्तिको दे दिया करें; क्योंकि अब उनके भतीजेको काम मिल गया।

सेठजीके मनमें आ गया—'चलो देखें।' × × ×
सीधा लेकर वे कर्मचारियोंके साथ वृद्ध ब्राह्मण वृद्ध दम्पतीको भतीजेका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। उन्होंने सेठकी कोठीपर जाकर उनसे भेंट की और उनसे अनुरोध किया कि वे अब उनको मिलनेवाला सीधा किसी अन्य व्यक्तिको दे दिया करें; क्योंकि अब उनके भतीजेको काम मिल गया।

वृद्ध दम्पतीने किसी तरह दरवाजा खोला। सेठने उनसे पूछा—'बाबा! आपकी बेटी कहाँ है?'
भतीजेका पत्र भी उन्होंने सेठको दिखाया। पर सेठ बोला—'यह नहीं हो सकता बाबा। आप नाराज न हों। जैसा आपका वह भतीजा, वैसे ही मैं आपका बेटा। आपको तो यह सीधा लेना ही होगा।'

वे तो हैरान। बोले—'कहाँ? हमारे तो कोई बेटी × × ×
नहीं, एक भतीजा है जो कलकत्तेमें रहता है।' वृद्ध दम्पती सेठके आग्रहको टाल नहीं सके। सेठके यहाँसे सीधा आता रहा। भतीजेके यहाँसे आनेवाले पैसेसे वे साधु-संन्यासियों और दीनोंकी सेवा करने लगे।

'अच्छा, यह तो बताइये, आपने कलसे कुछ खाया × × ×
पिया है या नहीं?' भतीजेका पत्र भी उन्होंने सेठको दिखाया। पर सेठ बोला—'यह नहीं हो सकता बाबा। आप नाराज न हों। जैसा आपका वह भतीजा, वैसे ही मैं आपका बेटा। आपको तो यह सीधा लेना ही होगा।'

'क्यों हमने तो किसीसे कुछ कहा नहीं!' × × ×
'आपकी बेटी कह रही थी कि मेरे माँ-बाबा वृद्ध दम्पती सेठके आग्रहको टाल नहीं सके। सेठके यहाँसे सीधा आता रहा। भतीजेके यहाँसे आनेवाले पैसेसे वे साधु-संन्यासियों और दीनोंकी सेवा करने लगे।
कलसे भूखे हैं। भूखसे उनके प्राण जा रहे हैं!'
'सेठजी, और किसीने कहा होगा। आप मकान × × ×
भूल तो नहीं गये हैं?' भतीजेका पत्र भी उन्होंने सेठको दिखाया। पर सेठ बोला—'यह नहीं हो सकता बाबा। आप नाराज न हों। जैसा आपका वह भतीजा, वैसे ही मैं आपका बेटा। आपको तो यह सीधा लेना ही होगा।'

सेठने कर्मचारियोंसे पूछा। वे बोले—'नहीं सेठजी! × × ×
यही मकान है। हमें खूब याद है। यहींपर वह लड़की

कलकत्ता जाल बिछा था। श्रीरामपुरसे काशी पहुँचना विषम समस्या थी।

श्रद्धा और विश्वासकी कैसी अद्भुत कहानी!

× × ×

‘यह सारा खेल श्रद्धा और विश्वासका ही तो है।’
कहते हुए भट्टाचार्य महाशयने एक और घटना सुनायी।

घटना है उनकी माताकी मौसीके सम्बन्धमें।

वैधव्यके दिन बिता रही थीं बेचारी। बाबा विश्वनाथजीके दर्शनोंकी, काशी पहुँचनेकी बड़ी लालसा थी उनकी।

गरीबीका जाल बिछा था। श्रीरामपुरसे काशी पहुँचना विषम समस्या थी।

उनकी एक ही रट थी—

‘विश्वनाथ बाबा टाका दाओ, देखा दाओ!’

(हे बाबा विश्वनाथ! पैसा दो, दर्शन दो!)

× × ×

अचानक एक दिन उन्हें एक पत्र मिला जिसमें लिखा था कि रेलवे कम्पनी एक नयी लाइन खोल रही है। उसके लिये तुम्हारी ससुरालकी जमीन रेलवेने ले ली है। उसका मुआविजा कलकत्ता आकर ले जाओ।

कलकत्ता जाते ही सात-आठ सौ रुपये मिल गये।

फिर विश्वनाथ बाबाके दर्शन करनेके लिये काशी जानेसे उन्हें कौन रोक सकता था?

× × ×

काश, यह श्रद्धा, यह विश्वास हममें होता! फिर तो कुछ कहना ही नहीं था। पर हमारी तो वही दशा है जिसका चित्रण रामकृष्ण परमहंसने एक दृष्टान्तमें किया है—

एक ग्वालिन नदी-पारसे दूध लेकर आया करती थी। बरसातके दिनोंमें नाव देरमें मिलनेसे दूध पहुँचानेमें बड़ी देर होती। एक दिन एक पण्डितजी, जो उससे दूध लेते थे, उससे बोले—‘तू रोज बड़ी देर कर देती है। क्यों नहीं तू रामका नाम लेकर नदी पार कर लिया करती! रामका नाम लेकर लोग भवसागर पार कर जाते हैं। तुझसे यह नदी भी पार नहीं की जाती!’

दूसरे दिनसे पण्डितजीको सबेरे ही दूध मिलने लगा।

कई दिन बाद पण्डितजीने ग्वालिनसे पूछा—‘अब

तो तू रोज सबेरे ही दूध ले आती है। अब तुझे रोज सबेरे ही नाव मिल जाती है?’

ग्वालिन बोली—‘अब मुझे नावकी कौन जरूरत है महाराज! आपने जो तरकीब बता दी है, उससे मेरी नावकी उतराई भी बच जाती है।’

पण्डितजी हैरान होकर बोले—‘कौन-सी तरकीब ग्वालिन?’

‘वही राम-नामवाली तरकीब! मैं रामका नाम लेती हूँ और उधरसे इधर चली आती हूँ और इधरसे उधर चली जाती हूँ।’

‘सच?’

‘और क्या झूठ कहती हूँ महाराज!’

पण्डितजी आकाशसे गिरे। सहज ही विश्वास न हो सका उन्हें ग्वालिनकी बातपर। बोले—‘मुझे दिखाओगी?’

‘हाँ-हाँ, चलिये न?’

दोनों चल दिये। ग्वालिन रामका नाम लेकर झम-झम करती हुई नदी पार करने लगी। पण्डितजी राम-राम करके आगे बढ़े पर पानी ज्यों-ज्यों बढ़ने लगा त्यों-त्यों वे अपनी धोती ऊपर सरकाने लगे! स्थिति डूबने-जैसी होने लगी!

ग्वालिनने पीछे मुड़कर देखा। बोली—‘यह क्या महाराज! आप रामका नाम भी लेते हैं और धोती भी समेटते जाते हैं?’

× × ×

हम भी इसी तरह रामका नाम लेते हैं और धोती भी समेटते जाते हैं। ग्वालिन-जैसा विश्वास हममें कहाँ है? उस वृद्ध दम्पतिकी तरह हम माँ अन्नपूर्णापर अपनेको कहाँ छोड़ते हैं? उस विधवा ब्राह्मणीकी भाँति हम परम विश्वाससे कहाँ कहते हैं—‘बाबा, टाका, दाओ, देखा दाओ!’ फिर यदि हम भवाटवीमें भटकते रहते हैं तो दोष किसका?

बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न राम।

राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव कि लह बिश्राम॥

मितव्ययिताका आदर्श

(श्रीरमाकान्तजी मिश्र)

अर्थशास्त्रकी ट्युटोरियल कक्षा। प्राचार्यमहोदयके सामने टेबलपर अभ्यास-पुस्तिकाएँ पड़ी थीं। छोटे प्रश्नोंके लंबे-चौड़े उत्तर। विद्यार्थियोंकी आँखें प्राचार्य महोदयके चेहरेपर थीं और प्राचार्य महोदयकी आँखें अभ्यासपुस्तिकाओंकी पंक्तियोंपर। उन्होंने पुस्तिकाओंको देखनेके बाद लड़कोंकी ओर देखते हुए कहा, 'Be clear and concise' (अर्थात् आपके उत्तर स्पष्ट एवं संक्षिप्त होने चाहिये)।

संध्याके समय एक दिन मन्त्रीमहोदय आये। आनेका उद्देश्य ‘राष्ट्रीय प्रतिरक्षा-कोष’ से सम्बन्धित था। उन्होंने भाषणके तारमें कह डाला,—‘आज राष्ट्रके सामने जो खतरा है, उसे दूर करना हम सबोंका परम कर्तव्य है। आज आवश्यकता है कि हम स्वयं अपनी कुछ आवश्यकताओंको भूल जायँ और राष्ट्रके हितमें अपने तुच्छ हितोंकी बलि दे दें……।’ अपने लंबे और सारगर्भित भाषणमें मन्त्रीजीने योजना एवं राष्ट्रीय रक्षाके लिये मितव्ययितापर जोर दिया।

देशके बड़े-बड़े समाचारपत्रोंने मुख-पृष्ठोंपर लिखा, 'Wage war on wastes' (अर्थात् हम बर्बादियोंसे लड़ें)।

श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने तो बहुत पहले ही आसक्ति और अनबुझी आवश्यकताओंके विषैलेपनपर प्रकाश डालते हुए अर्जुनसे कहा था—

ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।

सङ्घात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः ।

स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥

(२ । ६२-६३)

आवश्यकताओंकी अनन्त, दूषित कुण्डलिनी और उनके भयावह परिणामोंकी ओर लोगोंके ध्यान सदासे आकर्षित किये गये हैं।

* * *

हैं। जीवित रहनेके लिये हमें वायु चाहिये, ताप चाहिये, वस्त्र चाहिये, अन्न और जल चाहिये। यों कहिये, संसारमें आते ही आवश्यकताओंने हमें आ घेरा। फिर भी दो रास्ते हैं—अपव्यय और मितव्यय। इसीमें सारी अशान्ति और शान्ति बसती है।

लगाम ढीली की और घोड़ा लगा हवासे बातें करने। रास कड़ी हुई और बेचारा घोड़ा रास्तेपर आने लगा। पर एक ऐसा घोड़ा होता है, जो काफी ढीठ और उद्दण्ड हो जाता है। वह अपने प्राणोंकी भी परवा नहीं करता। लगामसे उसके जबड़े छिल जाते हैं, फिर भी वह रुकनेका नाम ही नहीं लेता जबतक कि सवार गिर नहीं पड़ता।

*

*

*

घरमें बच्चे नये खिलौनेके लिये मचलते हैं। औरतें नये गहनोंके लिये रूठती हैं। आवश्यकताओंकी गति अत्यन्त तीव्र है। हमें मोटर चाहिये, आलीशान मकान चाहिये, बगीचा चाहिये, सेवकोंका एक दल चाहिये। ये न भी मिलें, फिर भी दिवा-स्वप्न तो हम देखते ही हैं। इनके विषयमें।

इन सभी आवश्यकताओंके पीछे हमारी एक सच्ची आवश्यकता है कि इन बढ़ती आवश्यकताओंपर हमें नियन्त्रण कैसे करना चाहिये? आत्मसंयमद्वारा। आत्मसंयम कहाँसे आये? वस्तुओंकी निस्सारताका बोध होनेपर।

*

*

*

शहरमें अकेले आदमीके लिये दो कमरोंवाला एक फ्लैट क्या, एक कमरा भी काफी होता है। मेरे एक मित्रने पटना (राजेन्द्रनगर)-में अकेले दो कमरोंवाला फ्लैट लिया। वे एकमें सोते थे और दूसरेमें पढ़ते और मित्रोंसे मिल-जुल लेते थे। उन्होंने अपने विषयमें एक मनोरंजक कहानी हमें सुनायी। अपने कमरोंको धीरे-धीरे उन्होंने फर्नीचरसे सुसज्जित करना प्रारम्भ किया। अपने आरामके लिये एक आरामकुर्सी थी उनके यहाँ। अब

आप मानेंगे कि सभीकी कुछ आवश्यकताएँ होती



प्रयागका कुम्भ एवं अर्धकुम्भ

हिन्दू-समाजमें प्राचीन कालसे ही कुम्भ-पर्व मनानेकी प्रथा चली आ रही है। अमृतप्राप्तिके निमित्त देवताओं और दानवोंने मिलकर समुद्रमंथन किया। समुद्रमंथनके फलस्वरूप चौदह अप्रतिम रत्नोंकी प्राप्ति हुई, जिनमें अमृतकुम्भ भी एक था, परंतु अमृतप्राप्तिके अनन्तर अमृतकुम्भके लिये दोनों पक्षोंमें भयंकर युद्ध होने लगा। अमृतकुम्भको हस्तगत करनेके प्रयासमें उसकी बूँदें चार स्थानोंपर गिर पड़ीं; अतः उन्हीं चार स्थानोंपर कुम्भयोगमें कुम्भ-मेलेका आयोजन होता है। उपर्युक्त देवासुरसंग्राम बारह दिनोंतक चला। देवताओंके बारह दिन मनुष्यके बारह वर्षोंके बराबर होते हैं। अतः बारह वर्षोंके अनन्तर ही कुम्भ-पर्वका आयोजन होता है। कुम्भ-योगमें स्नान करनेका अप्रतिम माहात्म्य शास्त्रोंमें बताया गया है—

जघान वृत्रं स्वधितिवर्नेव
रुरोज पुरो अरदन् सिन्धून्।
बिभेद गिरिं नवमिन् कुम्भमा
गा इन्द्रो अकृणुत स्वयुग्भिः॥

(ऋग्वेद १०।८९।७)

‘कुम्भ-पर्वमें जानेवाला मनुष्य स्वयं दान-होमादि सत्कर्मोंके फलस्वरूप अपने पापोंको वैसे ही नष्ट करता है जैसे कुठार वनको काट देता है। जिस प्रकार गंगा नदी अपने तटोंको काटती हुई प्रवाहित होती है, उसी प्रकार कुम्भ-पर्व मनुष्यके पूर्वसंचित कर्मोंसे प्राप्त हुए शारीरिक पापोंको नष्ट करता है और नूतन (कच्चे) घड़ेकी तरह बादलको नष्ट-भ्रष्टकर संसारमें सुवृष्टि प्रदान करता है।’

तान्येव यः पुमान् योगे सोऽमृतत्वाय कल्पते।
देवा नमन्ति तत्रस्थान् यथा रंका धनाधिपान्॥

(स्कन्दपुराण)

‘जो मनुष्य कुम्भ-योगमें स्नान करता है, वह अमृतत्व (मुक्ति)-की प्राप्ति करता है। जिस प्रकार दरिद्र मनुष्य सम्पत्तिशालीको नम्रतासे अभिवादन करता है, उसी प्रकार कुम्भ-पर्वमें स्नान करनेवाले मनुष्यको देवगण नमस्कार करते हैं।’

हरिद्वार, प्रयाग, उज्जैन और नासिक—इन चारों स्थानोंमें ही क्रमशः बारह-बारह वर्षपर पूर्णकुम्भका मेला लगता है, जबकि हरिद्वार तथा प्रयागमें अर्धकुम्भ-पर्व भी मनाया जाता है, किंतु यह अर्धकुम्भ-पर्व उज्जैन और नासिकमें नहीं होता। अर्धकुम्भ पर्वका माहात्म्य भी कुम्भपर्वके समान ही माना जाता है।

तीर्थराज प्रयागमें होनेवाले कुम्भपर्वविषयक कतिपय शास्त्रीय वचनोंको यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

मेषराशिं गते जीवे मकरे चन्द्रभास्करो।
अमावास्या तदा योगः कुम्भाख्यस्तीर्थनायके॥

(स्कन्दपुराण)

‘जिस समय बृहस्पति मेष राशिपर स्थित हों तथा चन्द्रमा और सूर्य मकर राशिपर हों तो उस समय तीर्थराज प्रयागमें कुम्भ-योग होता है।’

सहस्रं कार्तिके स्नानं माघे स्नानशतानि च।
वैशाखे नर्मदा कोटिः कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥

(स्कन्दपुराण)

‘कार्तिक महीनेमें एक हजार बार [गंगामें] स्नान करनेसे, माघमें सौ बार [गंगामें] स्नान करनेसे और वैशाखमें करोड़ बार नर्मदामें स्नान करनेसे जो फल होता है, वह प्रयागमें कुम्भ-पर्वपर केवल एक ही बार स्नान करनेसे प्राप्त होता है।’

अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च।
लक्षं प्रदक्षिणा भूमेः कुम्भस्नानेन तत्फलम्॥

(विष्णुपुराण)

‘हजार अश्वमेध-यज्ञ करनेसे, सौ वाजपेय-यज्ञ करनेसे और लाख बार पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह फल केवल प्रयागके कुम्भस्नानसे प्राप्त होता है।

प्रयागमें कुम्भके तीन स्नान होते हैं। यहाँ कुम्भका प्रथम स्नान मकरसंक्रान्ति (मेषराशिपर बृहस्पतिका संयोग होने)-से प्रारम्भ होता है। द्वितीय स्नान (प्रधान स्नान) माघ अमावस्या (मौनी अमावस्या)-को होता है। तृतीय स्नान माघ शुक्ल पंचमी (वसन्तपंचमी)-को होता है।

विलक्षण प्रेम और विलक्षण कृपा

[एक सुपात्र मुसलमान बालकका विलक्षण प्रेम और श्रीराधारानीकी विलक्षण कृपा]

(श्रीप्रमोदकुमारजी चट्टोपाध्याय)

प्रेमयोगिनी मीराने कितने दर्दभरे स्वरमें गाया था—
‘हे री मैं तो दरद दिवाणी, मेरो दरद न जाणै कोय।’ वह तो श्रीकृष्णके प्रेममें पागल थी, विरह-
व्यथासे व्याकुल थी और उसके आत्मीय-स्वजन अपने
धर्ममें मस्त थे, वे उसके दर्दके मर्मको भला कैसे समझ
सकते थे? उन्हें तो उसकी सारी हरकत ही उलटी
दीखती थी और वे उसके साथ, उसके ‘उलटे जीवन’ को
सुधारनेके लिये उसपर जुल्म ढाते थे। इसीलिये न उसने
घबराकर भक्त तुलसीदाससे राय पूछी थी कि ऐसी
दशामें उसे क्या करना चाहिये और उस सच्चे ज्ञानीने
कितना निःसंकोच लिख भेजा था कि—**‘जाके प्रिय न
राम बैदेही। तजिये ताहि कोटि बैरी सम जद्यपि
परम सनेही ॥’** सनेही होनेसे क्या, यदि उसे भगवान्‌पर
प्रेम नहीं, जो प्रेम-रससे अनभिज्ञ होकर प्रेमीपर अत्याचार
करता है, उस एकको ही करोड़ वैरी मानकर त्याग देना
चाहिये। और उपाय भी क्या है? भला ऐसे प्रेमहीन
सनेहियोंके स्थूल धर्मकी रक्षाके लिये कोई भगवद्भक्त
अपने अमर धर्मका कैसे त्याग कर सकता है?

वास्तवमें इस तरहके मीराँ-जैसे सच्चे भक्त दुर्लभ ही होते हैं और ऐसे भक्तोंके पावन दर्शन, चरित्र-श्रवण सब देशों और सब कालोंमें मंगलकारी होते हैं। सौभाग्यसे मुझे एक बार ऐसे मुसलमान बालक भक्तके दर्शन अनायास कुछ क्षणके लिये प्राप्त हुए थे और वे क्षण मेरे जीवनके अमूल्य क्षणोंमें हैं। उन्हीं पावन क्षणोंकी कुछ झाँकी मैं अपने पाठकोंको भी देना चाहता हूँ।

अपने जीवनके प्रारम्भिक कालमें अवश्य कुछ समझ हो जानेके बाद मैं एक तीव्र आवेग लेकर घरसे बाहर निकल पड़ा था। इच्छा थी कि सारे भारतमें घूम-घूमकर साधु-महात्माओंके दर्शन करूँगा और यदि किसीकी कृपा प्राप्त हो सकी तो अपने जीवनको धन्य बनाऊँगा।

मास था, प्रथम शीतका मधुर स्पर्श आरम्भ हो गया था। प्रफुल्ल मन, स्वस्थ शरीर और हृदयमें उद्दाम आशा लेकर उत्तरप्रदेशके तीर्थोंका भ्रमण कर रहा था। घूमते-फिरते मथुरा आया और सोचा कि दो-एक दिन यहाँ विश्राम करके वृन्दावन चलाँगा।

पथकी सारी धूल पावन यमुनाके जलमें धोकर मानो यात्राकी सारी थकानसे मुक्त हो गया—प्रसन्नचित्त होकर चुपचाप विश्रामघाटपर बैठ गया। वहीं सन्ध्याके समय भगवान्की आरती देखी। यह आरती मैंने पहले भी देखी थी, परंतु आज....—मानो उसमें कुछ नयापन था—सात्त्विक उपासनाके साथ मानो अपूर्व शिल्प-चातुरीका समावेश था। ऐसा मैंने भारतके और किसी तीर्थमें नहीं देखा। बैठे-बैठे एक अपूर्व तन्मयताका अनुभव कर रहा था।

भीड़ धीरे-धीरे कम होने लगी। कितने ही नर-नारी आये और चले गये। कुछ प्रौढ़ व्यक्ति घाटकी सीढ़ियोंपर बैठकर सन्ध्या-वन्दन करनेके बाद आचमन करके चले गये। कितने ही देशी-विदेशी आये और चले गये, कितनी ही मथुरावासिनी मधुरहासिनी रमणियाँ अपने आकर्षक स्वरका आनन्द बिखेरती हुई निकल गयीं। अब मैं भी वहाँसे चलनेके लिये तैयार हुआ।

घाटके पास ही रास्तेमें एक मुसलमान खड़ा था, एकदम साधारण नहीं, कुछ-कुछ भद्र और आधुनिक ही प्रतीत होता था। उसकी कच्ची-पक्की मूँछ-दाढ़ी वैसी ही छोटी-छोटी छँटी हुई थी जैसे प्रायः उत्तर भारतके मुसलमानोंकी देखी जाती है। धूपमें तपा हुआ उसका मुख लालिमासे उज्ज्वल था, छोटी-छोटी आँखोंकी दृष्टि काफी पैनी थी। उसके हाव-भावसे ऐसा लगता था मानो कोई खोयी हुई चीज खोज रहा हो। देखा, मुझपर भी उसकी दृष्टि निबड्ड है। उससे आँख मिलते

अगर भी आप **MADE WITH LOVE BY Arvind Singh**

तब उसने फिर कहा—‘हाँ, वही कहता हूँ...हमारा जो मजहब है, एक दिन सारी दुनियाको उसे कबूल करना होगा, नहीं तो किसीका उद्धार नहीं हो सकता। हम वही मुसलमान हैं, हिन्दू हमारे लिये काफिर हैं। हर एक हिन्दू, वह चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो, हमारे

‘कासिम नामका मेरा एक भतीजा है, उसीके साथ पढ़ता था। कासिम अभीसे पाँच बार नमाज पढ़ता है, जो हम भी नहीं कर सकते। वह बहुत ऊँचे किस्मका मुसलमान है, पीछे वह एक नामजादा आदमी होगा, ऐसा हम सबको यकीन है। उस वाक्याके कुछ दिन बाद कासिमने एक दिन शामकी नमाजके बाद चोरी-चोरी आकर मुझसे कहा, ‘चचाजान! दादर तो एकदम काफिर हो गया है। हिन्दुओंके मन्दिरमें जो देवता हैं उनकी ओर देखा करता है, दरवाजेके पास खड़ा होकर



‘अच्छा, तो क्या आपने कभी ऐसा देखा है कि किसी हिन्दूने किसी मुसलमानको हिन्दू बनानेकी चेष्टा की है?’

मथुरासे आनेके बाद अबतक उस भद्र मुसलमानके पुत्र दादर रहमानकी बात ही मेरे मनमें बार-बार आया करती थी। उसके अन्तरमें प्रेम-धर्मकी स्फुरणाकी बात, उसका बिना क्रोध किये इतना अत्याचार सहना, फिर दृढ़-संकल्प बालकका गृहत्याग, जाने कहाँ अन्तर्धान हो जाना आदि-आदि बातें बार-बार आकर मनमें हलचल पैदा करती थीं। किंतु जैसे ही इस मूर्तिको सम्मुख देखा, वे सब बातें काफूर हो गयीं, इसी मूर्तिपर चित्त तन्मय हो गया, प्रश्न करूँ या न करूँ यह

खैर, हमारी समझ भी कितनी। भक्तिधर्म, प्रेमधर्म आदिकी बातें साधु-महात्माओंके मुँहसे हम सुनते रहते हैं—कभी-कभी मनमें यह अभिमान भी होता है कि हम उसका तात्पर्य समझ गये, परंतु भगवान् ही जानते हैं कि उसे समझनेयोग्य यथार्थ बुद्धि हममें कितनी है! यह सब देख-समझकर ही अब यह कहता हूँ कि इस स्थानमें सब कुछ अद्भुत है! इस बार मथुरामें पदार्पण करनेके

उसके सानिध्यमें आनन्दकी अतिशयतासे मेरी भी चैतन्य-लोप-जैसी अवस्था हो गयी। किंतु मेरी वह अवस्था दीर्घकालतक नहीं रही। उस किशोर योगीकी प्रत्यक्षदर्शी शक्तिके लिये सब कुछ जीवन्त सत्यसे ओतप्रोत था। भला उसका इतना मर्मस्पर्शी वर्णन सुनकर भी कौन ऐसा पशु होगा, जो वहाँ स्वयं जाकर प्रत्यक्ष दर्शन करनेकी तीव्र लालसासे अभिभूत न हो जाय। मेरे मनमें उत्तरोत्तर लोभ बढ़ने लगा। जैसे ही देखा कि उसकी अवस्था कुछ-कुछ बहिर्मुखी हो रही है, मैं बोल

इतनेमें चम्पा पास आ गयी। उसका रूप देखकर मैं स्तम्भित हो गया। यह तो वह व्रजनारी नहीं, जिसने मुझे यहाँ रहनेके लिये कहा था, वेषभूषा भी तो वह नहीं? यह तो एक अपूर्व ही वेष था, अबतक किसीको

कहानी—

‘जिन खोजा तिन पाइयाँ’

(श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')

कहते हैं कि कोई राजा शत्रुसे पराजित होकर भागा। उसने कई बार सैन्य एकत्र करके शत्रुपर आक्रमण किया, पर सफल न हो सका। भागकर वह जिस गुफामें छिपा था, उसमें एक मकड़ी एक स्थानपर अपना तन्तु लगाकर दूसरे स्थानको उछाल मार रही थी। वह अपना तन्तु वहाँतक पहुँचाना चाहती थी। राजा चुपचाप मकड़ीको देखने लगा। मकड़ी उछलती और विफल होकर गिर जाती। बार-बार यही क्रम चलता रहा। अंतमें मकड़ीने अपनी विफलताओंपर विजय पायी। भूपतिने मकड़ीसे शिक्षा ली, उन्होंने निराशा त्यागकर शत्रुपर प्रत्याक्रमण किया। संयोगवश इस बार विजयलक्ष्मीने वरमाला उन्हींके गलेमें डाली।

जरासन्ध मथुराकी सत्रह चढ़ाइयोंमें बुरी तरह पराजित हुआ, पर उसने भी अंतमें विजय लेकर छोड़ी। मैंने अपनी आँखों देखा है कि लोग प्रयागमें त्रिवेणीजीके गम्भीर जलमें पैसे छोड़ते हैं और मछुए डुबकी लगाकर उन्हें निकाल लेते हैं। एक, दो, चार, दस—चाहे जितनी डुबकियाँ लगानी पड़ें, वे पैसेको निकाल ही लेते हैं। पाश्चात्य लोगोंने उस धधकते हुए मरुस्थल सहारा (अफ्रीका)—में नील नदीका उद्गम ढूँढ़ निकाला। अपने सिरपर चमकते हुए उस लाल-लाल तारे (मंगल)—का पता पा लिया। जब लोग इतनी कठिन-कठिन वस्तुओंको प्राप्त कर लेते हैं तो क्या मैं अपने लक्ष्यको नहीं पा सकता? देखूँ, असफलता कबतक मेरा पीछा करती है। या तो मैं ही रहूँगा या यह विफलता ही।

लगातार पांच वर्षों से इस आर लगा हूँ। न दिनका
चैन, न रात्रिमें विश्राम। कभी जंगलोंमें, कभी पर्वतोंपर,
कभी नगरोंमें, कभी नदियोंके किनारे—सभी प्रकारके स्थानोंमें
गया। मेरी रात्रि कभी घोर वनमें शिलाके ऊपर, कभी
धर्मशालामें, कभी किसी सूने मन्दिरमें और कभी किसी
पथके वृक्षतले बीतती है। सभी रंगके साधुओंको देखा—
—Hinduism Discord Server <https://discord.gg/dh>
लाल, पीले, गहरे, सफेद और राजाओं जैसे हस्वयन्

तथा नंगे भभूतिये भी। मुझे 'बं शंकर'की दम लगानेवाले, 'जय मैया'का प्याला चढ़ानेवाले और केवल फलाहारी या दुग्धाहारी भी मिले। भोगी, योगी, सिद्ध, पाखण्डी, भक्त, ज्ञानी, याज्ञिक प्रभृति सबके दर्शन हुए। सब हुआ, पर मुझे मेरे योग्य गुरु न मिले। न मेरा भटकना बंद हुआ और न मुझे मेरे अनुरूप कोई मिला ही।

बहुतोंने मुझपर दया की, दीक्षा देनेको भी बहुत तत्पर थे। जिनके दर्शनोंको लोग तरसते हैं, वे महापुरुष, सिद्ध योगी भी मेरे ऊपर प्रसन्न हुए। मैं चाहता तो वे भी मुझे अपने चरणोंमें रख लेते, पर मैं चाहता तब तो! मैं जो चाहता था, वह वहाँ भी मुझे नहीं मिला। मेरी अभीष्टसिद्धि वहाँ भी दिखायी न दी!

आप सोचते होंगे कि मैं ऐसी क्या विशेषता चाहता था। मैं सिद्ध या त्रिगुणातीतके फेरमें नहीं था। बात यह है कि मैं न तो अपनेपर विश्वास करता और न अपने मनपर। सभी महापुरुष साधन बतलाना चाहते थे—‘साधन करो, आत्मोद्धार होगा।’ बात तो ठीक थी, पर साधन करे कौन ? मुझे विश्वास नहीं कि मैं साधन कर सकूँगा। मैं तो एक ऐसा गुरु चाहता था, जो कह दे ‘अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि’ जो मेरा पूरा उत्तरदायित्व ले ले। चाहें साधन करावे या तपस्या, पर मनको उस साधनमें प्रवृत्त रखनेका भार उसपर हो। जो भी कराना हो करावे, पर मैं न अपने अच्छे कर्मोंका उत्तरदायी रहूँ न दुष्कर्मोंका। मुझसे साधन हो तो ठीक और मैं अहंकारी रहूँ तो ठीक। सब वही जाने, मैं कुछ न जानूँ। ऐसा उत्तरदायित्व लेनेवाला मुझे कोई कहीं भी नहीं मिला।

(2)

निराश हो चुका था। भटकता हुआ ब्रजमें पहुँचा। कई दिनका भूखा था, मुझे पता नहीं किसने लाकर वे रोटियाँ दीं। वे एक वृद्ध महात्मा थे, इतना ही जानता हूँ। बिना माँगे वे रोटियाँ लेकर आये और बोले—‘तुम बहुत भूखे हो, लो, इन्हें खा लो। मैंने रोटीयाँ से लो,

एकने कहा—‘दादा! यो बावरो भूखो सो लगे, याकूँ कछू खवावौ।’ उनमेंसे एक जो सबसे बड़े थे, गोरे-गोरे-से, उन्होंने कहा—‘अच्छो, तू दूध तौ पी ले।’ मैंने सिर हिला दिया। ‘च्यों? तोय भूख नाय लगी?’ भूख तो लगी है, पर मैंने प्रतिज्ञा कर रखी है। वे सब हँस पड़े। उस साँवले कुमारने कहा—‘प्रतिज्ञा कहा करी है?’ उसमें कुछ ऐसा आकर्षण था कि मैं उन बच्चोंसे भी कुछ छिपा न सका। अनावश्यक था, फिर भी मैंने अपनी सारी दशा कही. अपनी प्रतिज्ञा भी सनायी।



॥ इस प्रकार श्रीमदरूपगोस्वामीविरचित स्तवमालामें श्रीराधिकाका आनन्दचन्द्रिकासंज्ञक दशनामात्मक स्तोत्र सम्पूर्ण हुआ ॥

गोचरभूमिकी गौरव-गाथा

(श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)

वह भी एक युग था जब हमारे भारतवर्षमें गोचर-भूमिकी प्रचुरता थी और निर्धन-से-निर्धन व्यक्ति भी गायें पाल सकता था। गोचरभूमिमें चरनेवाली गायें हरी घास या वनस्पतिके प्रभावसे नीरोग और हृष्ट-पुष्ट रहतीं और उनका दूध सुपाच्य तथा पुष्टिकारक होता था। उन गायोंका मूत्र सर्व रोगों—विशेषकर उदर, नेत्र तथा कर्ण-रोगोंको समूल नष्ट करनेकी क्षमता रखता था। आज गोदुग्ध-मूत्रादिमें वैसा चमत्कार न दीखनेका यही मुख्य कारण है कि हमारे देशमें गोचरभूमिकी समुचित व्यवस्था नहीं है। पर, वैदिक युगमें गोचरभूमिका बड़ा महत्त्व था। ऋग्वेद (१।२५।१६) में एक मन्त्र है—

परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु।
इच्छन्तीरुरुचक्षसम्॥

इसका भाव है कि गायें जिस तरह गोचरभूमिकी ओर जाती हैं, उसी तरह उस महान् तेजस्वी परमात्माकी प्राप्तिकी कामना करती हुई बुद्धि उसीकी ओर दौड़ती रहे। ईश्वरकी ओर बुद्धि लगी रहे, यह भाव व्यक्त करनेके लिये गायोंके गोचरभूमिकी ओर जानेका दृष्टान्त दिया गया है। इसी प्रकार ऋग्वेद (१।७।३) में एक दूसरा मन्त्र है—

इन्द्रो दीर्घाय चक्षस आ सूर्य रोहयद्विवि। वि
गोभिरद्रिमैरयत्॥

भाव यह कि सुरपति इन्द्रने दूरसे प्रकाश दीख पड़े, इस हेतु सूर्यको द्युलोकमें रखा और स्वयं गायोंके संग पर्वतकी ओर प्रस्थान किया। दूसरे शब्दोंमें—गायोंको चरनेके लिये पर्वतोंपर भेजना चाहिये। पर्वत भी गोचर-भूमिकी श्रेणीमें आते हैं। पर्वतका पर्याय गोत्र है, जिसका एक अर्थ गायोंको त्राण देनेवाला भी होता है। पर्वतोंपर गौओंको पर्याप्त चारा और जल तो सुलभ रहता ही है, उन्हें शुद्ध वायु और व्यायामलाभ भी हो जाता है।

पद्मपुराण, मनु, याज्ञवल्क्य तथा नारदादि स्मृतियोंमें

भी गोचरभूमिका वर्णन मिलता है। उन सबका सारांश संक्षेपमें यही है कि यथाशक्ति गोचरभूमि छोड़नेवालेको नित्य-प्रति सौसे अधिक ब्राह्मणभोजन करानेका पुण्य मिलता है और वह स्वर्गका अधिकारी होता है, नरकमें नहीं जाता। गोचरभूमिको रोकने या बाधा पहुँचानेवाले तथा वृक्षोंको नष्ट करनेवाले इक्कीस पीढ़ीतक रौरव नरकमें पड़े रहते हैं। चरती हुई गौओंको बाधा पहुँचानेवालोंको समर्थ ग्रामरक्षक दण्ड दे, ऐसा पद्मपुराणमें कहा गया है—

गोप्रचारं यथाशक्ति यो वै त्यजति हेतुना।

दिने दिने ब्रह्मभोज्यं पुण्यं तस्य शताधिकम्॥

तस्माद् गवां प्रचारं तु मुक्त्वा स्वर्गात्तु ह्रियते।

यच्छिनत्ति द्रुमं पुण्यं गोप्रचारं छिनत्त्यपि॥

तस्यैकविंशपुरुषाः पच्यन्ते रौरवेषु च।

गोचारघ्नं ग्रामगोपः शक्तो ज्ञात्वा तु दण्डयेत्॥

(सृष्टिखण्ड, अ० ५९, श्लोक ३८—४०)

पद्मपुराणमें वर्णित एक प्रसंगके अनुसार चरती हुई गायको रोकनेसे नरकमें जाना पड़ता है। स्वयं महाराज जनकको चरती हुई गायको रोकनेके फलस्वरूप नरकका द्वार देखना पड़ा था। सावधान रहकर आत्मरक्षा करना कर्तव्य है; पर चरती गायको ही क्या, आहार करते समय जीवमात्रको रोकना या मारना मनुष्यता नहीं है। धार्मिक दृष्टिसे भी ऐसा करना अनुचित है।

पहले कहा गया है कि हमारे देशमें गोचरभूमिकी प्रचुरता थी। इतना ही नहीं; अपितु राजवर्ग तथा प्रजावर्ग दोनोंकी ओरसे गोचरभूमि छोड़ी जाती थी। पुण्यलाभकी दृष्टिसे धर्मशाला, पाठशाला, कूप और तालाब आदि बनवानेकी प्रथाकी भाँति गोचरभूमि खरीदकर कृष्णार्पण करनेकी उस युगमें प्रथा थी। आज भी वे गोचरभूमियाँ विद्यमान हैं और उनके दानपत्रोंमें स्पष्ट अंकित है—
'इस गोचरभूमिको नष्ट करनेवाले यावच्चन्द्रदिवाकर नरकवास करेंगे।'

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

गाँवके निकट चारों ओर चार सौ हाथ यानी तीन बार फेंकनेसे लकड़ी जहाँ जाकर गिरे, वहाँतककी भूमि और नगरके निकट चारों ओर इससे तिगुनी भूमि यानी बारह सौ हाथ भूमि गोचारणके लिये छोड़नेका आदेश देते हुए मनुजी आगे कहते हैं कि यदि उतनी भूमिके अन्दरकी किसी ऐसी कृषिको, जिसके चारों ओर बाड़ न लगे हों, ग्रामके पशु नष्ट कर दें तो यह उनका अपराध नहीं और इसके लिये पशुरक्षकको राजदण्ड नहीं मिलना चाहिये—

धनुश्शतं परीहारो ग्रामस्य स्यात् समन्ततः ।

धनुश्शतं परीहारो ग्रामस्य स्यात् समन्ततः ।

शम्यापातास्त्रयो वापि त्रिगुणो नगरस्य तु॥

तत्रापरिवृतं धान्यं विहंस्युः पशवो यदि।

न तत्र प्रणयेद् दण्डं नृपतिः पशुरक्षिणाम्॥

(मनुस्मृति ८। २३७-२३८)

महर्षि याज्ञवल्क्यका भी यही मत है। उन्होंने पर्वतकी तराईके गाँवोंके निकट आठ सौ हाथ तथा नगरके निकट सोलह सौ हाथ गोचरभूमि छोड़नेकी व्यवस्था दी है। लिखा है—

धनुश्शतं परीणाहो ग्रामे क्षेत्रान्तरं भवेत् ।

द्वे शते खर्वटस्य स्यान्नगरस्य चतुश्शतम् ॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति २।१६७)

यह भी आदेश है कि खेत गाँव तथा शहरसे दूर हों और खेतोंमें बाढ़ घनी हो। बाढ़की गहराई इतनी हो कि कृषितक ऊँटकी दृष्टि भी न पहुँच सके और न कुत्ते, सूअर आदि ही उसके छिद्रोंसे किसी प्रकार अन्दरकी ओर प्रविष्ट हो सकें। 'नारदस्मृति' के अनुसार बाढ़ न लगानेके कारण खेतीको यदि पशु चर जायँ या खेतमें घुसँ तो राजा पशुओंको दण्ड नहीं दे सकता, वह उन्हें हँकवा सकता है। बाढ़ तोड़कर यदि पशु कृषिको नष्ट करें तो वे दण्डके अधिकारी होंगे।

मनुका भी यह कथन है कि राहके निकट या गाँवके पड़ोसके बाड़ लगे खेतोंमें यदि पशु किसी प्रकार पहुँचकर अनाज खा जायँ तो राजा पशुपालकपर सौ पण

सिर्फ हँकवा दे—

पथि क्षेत्रे परिवृते ग्रामान्तीयेऽथवा पुनः ।

स कालः शतदण्डार्हो विपालान् वारयेत्पशून् ॥

(मनुस्मृति ८।२४०)

महर्षि याज्ञवल्क्यके वचनानुसार राह, ग्राम और गोचरभूमिके निकटके खेतको यदि रखवालेकी अज्ञातावस्थामें पशु नष्ट कर दें तो वह दोषी नहीं होगा। हाँ, यदि खेतको रखवाला जान-बूझकर चरा दे तो अपराधी है और चोरकी भाँति उसे दण्ड मिलना चाहिये—

पथि ग्रामविवीतान्ते क्षेत्रे दोषो न विद्यते।

अकामतः कामचारे चौरवद्दण्डमर्हति ॥

(याज्ञवल्क्यस्मृति २।१६२)

अन्तमें एक अत्यन्त रोचक और तथ्यपूर्ण प्रसंग उल्लेख्य है, जिससे गोचरभूमि हड़पनेवाले नराधमोंके पापकी भयंकरतापर प्रकाश पड़ता है। एक बार एक चाण्डालकी पत्नी चिताग्निमें नर-कपाल रखकर उसमें कौवेका मांस पकाया और उसको उसने कुत्तेके चमड़ेसे ढँक रखा था। एक व्यक्तिको यह देखकर स्वभावतः कौतूहल हुआ और उसने चाण्डालिनीसे पूछा—‘तूने ऐसी घृणित चीजको भी क्यों ढँक रखा है?’ उसने कितना मार्मिक उत्तर दिया था—‘मैंने इसे इस भयसे ढँक रखा है कि मेरा यह स्थान खेतोंके समीप है। यदि किसी ऐसे महापापी व्यक्तिकी, जिसने गोचरभूमिको अपने खेतमें मिला लिया है, दृष्टि पड़ जायगी तो मेरा यह आहार ग्रहण करने लायक नहीं रह जायगा।’

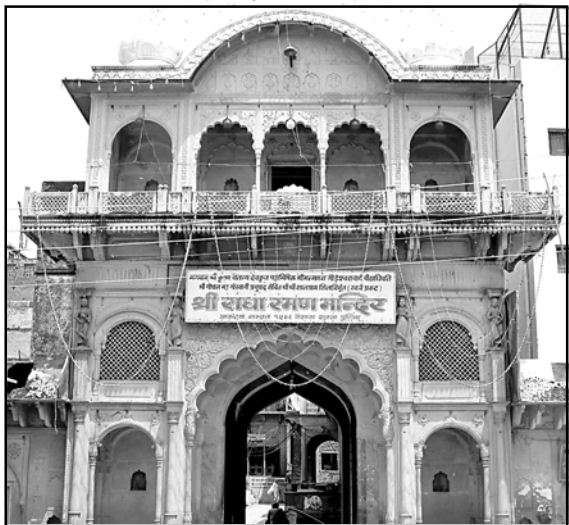
नृकपाले तु चाण्डाली काकमांसं श्वचर्मणा ।

चछाद गोचरक्षोणीकृषिकृद्दृष्टिभीतितः ॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोचरभूमि छोड़ना महान् पुण्य और उसे नष्ट करना या हड़पना महापाप है। हमारे देशमें गोवधकी भाँति गोचरभूमि भी एक समस्याके रूपमें उपस्थित है। गोचरभूमिका हमारे यहाँ बड़ा अभाव-सा है और उसकी बड़ी दुर्व्यवस्था है। इसके

वृन्दावनका श्रीराधारमणलाल मंदिर

(डॉ० श्रीभागवतकृष्णजी नांगिया)



श्रीराधारमणलालजीका मन्दिर सुप्रसिद्ध गौड़ीय सप्त देवालियोंमेंसे एक है। षड्गोस्वामियोंमें अन्यतम श्रीपादगोपालभट्ट गोस्वामीद्वारा प्रकटित और सेवित श्रीराधारमणलालजी भक्तोंको नित्य नव उल्लास और आनन्द प्रदान करते हैं।

श्रीराधारमणलालजी पहले शालग्रामरूपमें विराजमान थे। एक समय किसी भक्तने श्रीधाम वृन्दावनमें आकर समस्त श्रीविग्रहोंके लिये वस्त्र-अलंकार भेंट किये। श्रीपाद गोपालभट्टजी मनमें विचारने लगे कि मेरे आराध्य भी यदि अन्य श्रीविग्रहोंकी भाँति होते तो मैं भी उन्हें इन वस्त्रालंकारोंसे विभूषित करता। श्रीनृसिंहचतुर्दशीके दिन प्रह्लादके प्रेमके वशीभूत होकर प्रभु खम्भेसे प्रकट हो सकते हैं तो क्या मेरा ऐसा सौभाग्य होगा कि प्रभु शालग्रामसे प्रकट हो जायँ। उन्होंने बहुत आर्त होकर विनय की। उस दिनकी रात्रि व्यतीत होनेके पश्चात् वैशाख शुक्ला पूर्णिमाको प्रातःकाल यह देखकर उनके आनन्दकी सीमा न रही कि श्रीशालग्राम त्रिभंगललित, द्विभुज, मुरलीधर, मधुरमूर्ति श्यामरूपमें आसनपर विराजमान हैं।

संवत् १५९९की वह वैशाख शुक्ला पूर्णिमा व्रजमें एक अपूर्व आनन्दोल्लास बिखेर रही थी। श्रीरूप-

सनातनादि गुरुजनोंके सान्निध्यमें महाभिषेक उत्सव हुआ और श्रीराधारमणलालजीने सबको आनन्द प्रदान किया श्रीराधारमणजीका मुख श्रीगोविन्ददेवके समान, वक्षःस्थल श्रीगोपीनाथके समान तथा चरणयुगल श्रीमदनमोहनके समान हैं। अतः श्रीराधारमणलालजीके दर्शनकर दर्शनार्थियोंको एक ही श्रीविग्रहमें चारों श्रीविग्रहोंके दर्शन प्राप्त होते हैं।



भक्तिरत्नाकर ग्रन्थसे यह जाना जाता है कि श्रीपाद गोपालभट्ट गोस्वामीने श्रीचैतन्यमहाप्रभुकी सेवाका सौभाग्य प्राप्त किया था और प्रभुने यह आदेश दिया था कि गोपाल! तुम श्रीवृन्दावन चले जाना, वहाँ श्रीरूप-सनातनके निकट रहकर भजन-साधनकर तुम्हें श्रीकृष्णकी प्राप्ति होगी।

माता-पिताके देहावसानके बाद श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी सब कुछ परित्यागकर श्रीधाम वृन्दावन आ गये। वे कुछ दिन श्रीराधा-श्यामकुण्डके बीच केलिकदम्बके नीचे वास करनेके बाद 'जावट' ग्रामके पास किशोरकुण्डपर भजन-साधन करने लगे। महाप्रभुको जब यह पता चला तो प्रभुने अपनी डोर, कौपीन, बहिर्वास और एक आसन इनके लिये प्रसादरूपमें भेजा; जो श्रीराधारमणमन्दिरमें आज भी संरक्षित हैं और समय-समयपर उनके दर्शन भी होते हैं। [श्रीहरिनाम]

सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र मिला। वास्तवमें ये गोपरमणियाँ प्रेम-जगत्की तो परम आदर्श हैं ही, नारी-जगत्में भी इनकी कहीं तुलना नहीं है। विश्व तो क्या, भगवत्-राज्यमें भी किसी भी नारीके चरित्रमें नारी-जीवनकी महिमामयी सेवाकी ऐसी आदर्श मनोहर सहज मूर्तिका विकास नहीं हुआ। सावित्री, अरुन्धती, लोपामुद्रा, उमा, रमा—किसीकी उपमा श्रीगोपांगनाओंके साथ नहीं दी जा सकती। आत्मसुख-लालसाकी गन्धसे रहित होकर केवल अपने प्रियतम श्रीकृष्णको सुखी करनेके लिये ही जीवन धारण करना, लोक-परलोक, भोग-मोक्ष—सब

श्रीराधाका प्रेम अचिन्त्य और अनिर्वचनीय है। उसका वर्णन न श्रीराधा कर सकती हैं, न श्रीमाधव ही करनेमें समर्थ हैं। कहनेके लिये इतना ही कहा जाता है कि वह प्रेम परम विशुद्ध तथा परम उज्ज्वल है। स्वर्णको बार-बार अग्निमें जलानेपर जैसे उसमें मिली हुई दूसरी धातु या दूसरी चीजें जल जाती हैं और वह स्वर्ण जैसे अत्यन्त विशुद्ध और उज्ज्वल हो जाता है, वैसे ही राधाका प्रेम केवल विशुद्ध प्रेम है। पर वह स्वर्णकी भाँति जलानेपर विशुद्ध नहीं हुआ है, वह तो सहज ही, स्वरूपतः ही ऐसा है। सच्चिदानन्दमयमें दूसरी धातु आती ही कहाँसे ? यह तो साधकोंके लिये बतलाया गया है कि श्रीकृष्ण-प्रेमकी साधनामें परिपक्व ब्रजरसके साधकके हृदयसे दूसरे राग और दूसरे काम सर्वथा जल जाते हैं और उनका प्रेम एकान्त परिशुद्ध हो जाता है। श्रीराधामें यह दिव्य प्रेम सहज और परमोच्च शिखरपर आरूढ़ है। इसी राधाप्रेमका दूसरा नाम अधिरूढ़ महाभाव है। इसमें केवल 'प्रियतम-सुख' ही सब कुछ है। शेष भगवत्कृपा।

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७५, शक १९४१, सन् २०१९, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, चैत्र कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
द्वितीया रात्रिमें ३।१० बजेतक	शुक्र	हस्त दिनमें १२।३६ बजेतक	२२ मार्च	तुलाराशि रात्रिमें १२।८ बजेसे, शक संवत् १९४१ प्रारम्भ।
तृतीया " १।४१ बजेतक	शनि	चित्रा " ११।३९ बजेतक	२३ "	भद्रा दिन में २।२५ बजेसे रात्रिमें १।४१ बजेतक।
चतुर्थी " १२।३६ बजेतक	रवि	स्वाती " ११।० बजेतक	२४ "	वृश्चिकराशि रात्रिशेष ४।५० बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।४२ बजे।
पंचमी " ११।५८ बजेतक	सोम	विशाखा " १०।४६ बजेतक	२५ "	रंगपंचमी।
षष्ठी " ११।५१ बजेतक	मंगल	अनुराधा " ११।२ बजेतक	२६ "	भद्रा रात्रिमें ११।५१ बजेसे, मूल दिनमें ११।२ बजेसे।
सप्तमी " १२।१५ बजेतक	बुध	ज्येष्ठा " ११।४८ बजेतक	२७ "	भद्रा दिनमें १२।४ बजेतक, धनुराशि दिनमें ११।४८ बजेसे।
अष्टमी " १।१० बजेतक	गुरु	मूल " १।३ बजेतक	२८ "	मूल दिनमें १।३ बजेतक।
नवमी " २।३१ बजेतक	शुक्र	पू०षा० " २।४५ बजेतक	२९ "	मकरराशि रात्रिमें ९।१८ बजेसे।
दशमी रात्रिशेष ४।१७ बजेतक	शनि	उ०षा० सायं ४।५५ बजेतक	३० "	भद्रा दिनमें ३।२४ बजेसे रात्रिशेष ४।१७ बजेतक।
एकादशी अहोरात्र	रवि	श्रवण रात्रिमें ७।२० बजेतक	३१ "	रेवतीका सूर्य रात्रिमें २।५४ बजे।
एकादशी प्रातः ६।१६ बजेतक	सोम	धनिष्ठा " ९।५६ बजेतक	१ अप्रैल	कुम्भराशि दिनमें ८।३८ बजेसे, पापमोचनी एकादशीव्रत (सबका), पंचकारम्भ दिनमें ८।३८ बजे।
द्वादशी दिनमें ८।२३ बजेतक	मंगल	शतभिषा " १२।३२ बजेतक	२ "	भौमप्रदोषव्रत।
त्रयोदशी " १०।२५ बजेतक	बुध	पू० भा० " २।५९ बजेतक	३ "	भद्रा दिनमें १०।२५ बजेसे रात्रिमें ११।१९ बजेतक, मीनराशि रात्रिमें ८।२२ बजेसे।
चतुर्दशी " १२।१२ बजेतक	गुरु	उ०भा० रात्रिशेष ५।७ बजेतक	४ "	श्राद्धादिकी अमावस्या, मूल रात्रिशेष ५।७ बजेसे।
अमावस्या १।३८ बजेतक	शुक्र	रेवती अहोरात्र	५ "	अमावस्या

सं० २०७५, शक १९४१, सन् २०१९, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, चैत्र शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदादिनमें २।३६ बजेतक	शनि	रेवती प्रातः ६।४८ बजेतक	६ अप्रैल	मेघराशि प्रातः ६।४८ बजेसे, चैत्र नवरात्रारम्भ, 'परिधावी' संवत्सर, पंचक समाप्त प्रातः ६।४८ बजे।
द्वितीया " ३।६ बजेतक	रवि	अश्विनी " ८।४ बजेतक	७ "	मूल प्रातः ८।४ बजेतक।
तृतीया " ३।३ बजेतक	सोम	भरणी दिनमें ८।४९ बजेतक	८ "	मत्स्यावतार, गणगौर, भद्रा रात्रिमें २।४७ बजेसे, वृषराशि दिनमें २।५३ बजेसे।
चतुर्थी " २।३० बजेतक	मंगल	कृत्तिका " ९।४ बजेतक	९ "	भद्रा दिनमें २।३० बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत।
पंचमी " १।३० बजेतक	बुध	रोहिणी " ८।४९ बजेतक	१० "	मिथुनराशि रात्रिमें ८।३० बजेसे।
षष्ठी " १२।३ बजेतक	गुरु	मृगशिरा " ८।१० बजेतक	११ "	श्रीस्कन्दषष्ठीव्रत।
सप्तमी " १०।१७ बजेतक	शुक्र	आर्द्रा प्रातः ६।० बजेतक	१२ "	भद्रा दिनमें १०।१७ बजेसे रात्रिमें ९।१७ बजेतक।
अष्टमी " ८।१६ बजेतक	शनि	पुनर्वसु " ५।५६ बजेतक	१३ "	श्रीदुर्गाष्टमीव्रत, श्रीदुर्गानवमीव्रत, मूल रात्रिशेष ४।२७ बजेसे।
नवमी प्रातः ६।० बजेतक	रवि	आश्लेषा रात्रिमें २।५० बजेतक	१४ "	सिंहराशि रात्रिमें २।५० बजेसे, मेघ-संक्रान्ति दिनमें ४।१५ बजे।
एकादशी रात्रिमें १।९ बजेतक	सोम	मघा " १।९ बजेतक	१५ "	भद्रा दिनमें २।२२ बजेसे रात्रिमें १।९ बजेतक, कामदा एकादशीव्रत (सबका), मूल रात्रिमें १।९ बजेतक।
द्वादशी " १०।४६ बजेतक	मंगल	पू०फा० " ११।३१ बजेतक	१६ "	कन्याराशि रात्रिशेष ५।८ बजेसे।
त्रयोदशी " ८।२८ बजेतक	बुध	उ०फा० " ९।५९ बजेतक	१७ "	प्रदोषव्रत, श्रीमहावीर-जयन्ती।
चतुर्दशी सायं ६।२१ बजेतक	गुरु	हस्त " ८।३९ बजेतक	१८ "	भद्रा सायं ६।२१ बजेसे रात्रिशेष ५।२६ बजेतक, व्रत-पूर्णिमा।
पूर्णिमा दिनमें ४।१२ बजेतक	शुक्र	चित्रा " ७।१७ बजेतक	१९ "	तुलाराशि दिनमें ८।८ बजेसे, पूर्णिमा, श्रीहनुमजयन्ती, वैशाखसप्तमी प्रारम्भ।

कृपानुभूति

(१)

श्रीराधारमणबिहारीजीके कृपाकटाक्षकी दिव्य अनुभूति

श्रीराधामाधवकी प्रत्यक्ष अनुकम्पाको प्रकट करनेवाली २०१५ की एक विलक्षण घटना मथुराके निकट लगभग १५ कि०मी० दूर 'महावन' कस्बेकी है। जिसे 'प्राचीन गोकुल' के नामसे भी जाना जाता है। भगवान् श्रीकृष्णके जन्मके बाद वसुदेवजी यमुना पारकर यहीं लाये थे। इसके सामने ही कोयला गाँव है, जहाँ वसुदेवजीने 'कोई लेऊ, कोई लेऊ,' ऐसा कहा था। इसीलिये इसका नाम कोयला पड़ गया; ऐसी अनुश्रुति है।

इसी महावन कस्बेके लिये; जो कि अपना ऐतिहासिक, पौराणिक एवं धार्मिक महत्त्व रखता है एवं जो व्रजभूमिके बारह वनोंमेंसे एक है, कहा गया है—

वनानि द्वादशान्याहुर्ग्रामानुत्तरदक्षिणे।

महावनं महाश्रेष्ठं कामं काम्यवनं तथा॥

(पद्मपुराण)

वृन्दावनसमीपे च मथुरानिकटे शुभे।

श्रीमहावनपार्श्वे च सैकते रमणस्थले॥

(गर्गसंहिता)

इस स्थानकी ऐसी दिव्यताका अवलोकनकर ही शायद आजसे लगभग दो सौ वर्ष पूर्व एक परम वीतरागी तेजस्वी संतका आगमन हुआ। उन्होंने इस स्थानकी पावनता एवं भगवान्की क्रीडास्थलीका अनुभव करते हुए यहीं तपस्या करनेका विचार बनाया। वे ऊँचे-ऊँचे रेतके टीलों तथा नागफनीसे घिरे जंगलके बीच छोटी-सी कुटिया बनाकर रहने लगे। भगवद्भक्तिमें लीन रहते हुए उन्होंने बारह वर्ष तक एक मुट्ठी चना खाकर जीवनयापन किया। मनमें एक ही इच्छा थी—श्रीराधारमणबिहारीका साक्षात् दर्शन। ठाकुरजीने इनकी इस व्यवस्थाको किसी वैश्यसे स्वप्नमें कहा, तब वह इनके पास आया और चनेकी व्यवस्था की। आप दिनमें एक बार ठाकुरजीका भोग लगाकर ही चना ग्रहण करते और जल पीकर निरन्तर जपमें लगे रहते। उन्हें यह विश्वास था कि ठाकुरजी अवश्य दर्शन देंगे।

एक दिन सन्त कुटिया बन्द करके भजन कर रहे थे, तभी आवाज आयी—'दरवाजा खोलो'। आपने समझा कि कोई ग्वाला होगा। जब तीन बार यही स्वर सुनाई दिया तब आप बोले, कौन है? आवाज आयी—'जिसका तुम भजन कर रहे हो।' तब सन्तने कहा—'भगवन्! यदि आप वही हैं, तब आपके लिये तो सब द्वार खुले ही हैं।' ऐसा कहते ही द्वार स्वतः खुल गया और श्रीवृषभानुनन्दिनीके साथ श्रीकृष्ण प्रकट हो गये।

उन सन्तका नाम था स्वामी ज्ञानदास। आज भी उनका महावनमें रमणरेतीधामके नामसे कार्ष्णि उदासीन आश्रम स्थापित है। कालान्तरमें स्वामी ज्ञानदासके अन्तरंग शिष्योंको भी उस भगवद्रूपके दर्शनकी इच्छा हुई। तब आप कुछ महात्माओंके साथ जयपुर गये किंतु कोई मूर्ति समझमें नहीं आयी, तब मूर्तिकारने कहा कि हम आपको मोम दे देते हैं, आप बनाकर दे दीजिये। स्वामी ज्ञानदासजीने ऐसा ही किया। ठाकुर श्रीराधारमणबिहारीलालजीकी मूर्ति बन गयी। उसकी प्राणप्रतिष्ठा इसी आश्रममें हुई, जो आज भी दर्शकोंको बलात् अपनी ओर आकर्षित करती है। इसी विग्रहसे सम्बन्धित घटना यहाँ प्रस्तुत है—

वर्ष २०१५ में इस आश्रममें सहस्रचण्डी महायज्ञ हुआ। उसमें आयोजकोंके परिवारीजन भी सम्मिलित थे। उसी परिवारकी एक माँ और उसकी नौ सालकी बेटी भी प्रारम्भसे समापन तक उपस्थित रही। नित्य दुर्गासप्तशतीका पाठ और सायंकाल हवन होता था। इसके अतिरिक्त ठाकुर श्रीराधारमणबिहारीलालजीकी मंगला, श्रृंगार, भोग आरती एवं शयनदर्शन भी होते। माँ, बेटी दोनों नियमसे यह सब करती थीं। बेटी छोटी थी फिर भी उसे ठाकुरके प्रति अत्यन्त अनुराग हो गया। कार्यक्रमके समापनके उपरान्त घर जाकर भी उसके हृदयसे श्रीरमणबिहारीकी छवि दूर नहीं हुई। किसी-न-किसी रूप उन्हें याद करना उसकी दिनचर्या बन गयी।

एक महीने बाद वही लड़की स्कूलसे घर आते समय अचानक बेहोश हो गयी। मुँहसे झाग आने लगा। किसीको कुछ समझमें नहीं आ रहा था कि अचानक यह क्या

है, मय्या मारेगी—बच्चेकी आवाजमें कुछ था। उसकी लाठी पकड़ी, और मैं एक तिनकेकी तरह बाहर आ गया।

‘लाला इतनी रातमें बाहर नाय निकलैं, खतरा रेवै’, नानाजी बालकको समझा रहे थे—‘तेरी मय्या तोहे लाडमें ये बाँसुरी और मोरपंखी लगाय दर्ई है, पर यासे कोई कृष्ण थोड़े ही बन जाय है, चल मैं तोकूँ तेरे घर पहुँचा आऊँ।’ मेरी चिन्ता छोड़, तोकूँ या दगरे (मार्ग) से पार कराय दूँ फिर जाऊँगा—बालक बोला। ‘अरे! तू तो बड़ा ही हठी बालक है, का करै है?’ यहीं गोवर्धन पर्वतमें डोलूँ और गय्या चराऊँ, कभी तेरे—से मूरखनकी मदद करूँ—बालकने हँसते—हँसते कहा। लाला! तेरी मय्या बड़ी भागवान है, जो कलयुगमें ऐसो बेटा पाया है। तेरे परिवारमें गिराज बाबाकी बड़ी कृपा है। नानाजीने आशीष दी। बाबरे तो पे कृपा नाय का? बालक बोला। लाला हमारी किस्मत कहाँ? अब देख परिक्रमा—जैसे शुभ काममें दलदलमें फँस गयो हतो, नानाजी

चलते-चलते बोले। अब ठीक मारग आय गयो है। अपना जप कर और परकम्मा लगा, मैं चला—बालककी आवाज आयी। ठीक है बेटा, सुखी रह और अपनी मय्या कू मेरी राम-राम कहियो, कहते-कहते नानाजी बालककी ओर पीछे मुड़े, वे चकित थे। मार्ग सुनसान था। अब नानाजीका विवेक जाग्रत् हुआ, स्वयं प्रभु आये थे। फिरसे पुकारा काफी समय उस स्थानपर बैठकर जप किया, रजमें लोट लगायी, अपनी मूर्खतापर रोये अपने भाग्यपर हँसे, ऐसा नानाजीने बताया। पर नानाजी भगवान्ने आपको इतने संकेत दिये, फिर भी आप नहीं समझे—मैंने पूछा। नानाजीने बताया, प्रभुके सामने बद्धि साथ नहीं देती।

अगर मेरा अनुभव भी आप-जैसा हो गया तो मैं तो यहीं घर बना लूँगा—मैंने कहा। नानाजी बोले—बेटे ! जब मन निर्मल होगा तो कुछ नहीं करना होगा, आओ, अब मौन होकर परिक्रमा पूर्ण करें।—श्रीराकेश कुमारजी

श्रीराधा-अष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्

ईश्वर उवाच

अथास्याः सम्प्रवक्ष्यामि नाम्नामष्टोत्तरं शतम् । यस्य सङ्कीर्तनादेव श्रीकृष्णं वशयेद् ध्रुवम् ॥ १ ॥
राधिका सुन्दरी गोपी कृष्णसङ्गमकारिणी । जञ्चलाक्षी कुरङ्गाक्षी गान्धर्वी वृषभानुजा ॥ २ ॥
वीणापाणिः स्मितमुखी रक्ताशोकलतालया । गोवर्धनचरी गोप्या गोपीवेषमनोहरा ॥ ३ ॥
चन्द्रावलीसपत्नी च दर्पणास्या कलावती । कृपावती सुप्रतीका तरुणी हृदयङ्गमा ॥ ४ ॥
कृष्णप्रिया कृष्णसखी विपरीतरतिप्रिया । प्रवीणा सुरतप्रीता चन्द्रास्या चारुविग्रहा ॥ ५ ॥
केकराक्षी हरेः कान्ता महालक्ष्मी सुकेलिनी । सङ्केतवटसंस्थाना कमनीया च कामिनी ॥ ६ ॥
वृषभानुसुता राधा किशोरी ललिता लता । विद्युद्वल्ली काञ्चनाभा कुमारी मुग्धवेशिनी ॥ ७ ॥
केशिनी केशवसखी नवनीतैकविक्रया । षोडशाब्दा कलापूर्णा जारिणी जारसङ्गिनी ॥ ८ ॥
हर्षिणी वर्षिणी वीरा धीरा धारा धरा धृतिः । यौवनस्था वनस्था च मधुरा मधुराकृतिः ॥ ९ ॥
वृषभानुपुरावासा मानलीलाविशारदा । दानलीला दानदात्री दण्डहस्ता भ्रुवोन्मता ॥ १० ॥
सुस्तनी मधुरास्या च बिम्बोष्ठी पञ्चमस्वरा । सङ्गीतकुशला सेव्या कृष्णवश्यत्वकारिणी ॥ ११ ॥
तारिणी हारिणी ह्रीला शीला लीला ललामिका । गोपाली दधिविक्रेत्री प्रौढा मुग्धा च मध्यका ॥ १२ ॥
स्वाधीनपतिका चोक्ता खण्डिता याभिसारिका । रसिका रसिनी रस्या रसशास्त्रैकशेवधिः ॥ १३ ॥
पालिका लालिका लज्जा लालसा ललनामणिः । बहुरूपा सुरूपा च सुप्रसन्ना महामतिः ॥ १४ ॥
मरालगमना मत्ता मन्त्रिणी मन्त्रनायिका । मन्त्रराजैकसंसेव्या मन्त्रराजैकसिद्धिदा ॥ १५ ॥
अष्टादशाक्षरफला अष्टाक्षरनिषेविता । इत्येतद्राधिकादेव्या नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ॥ १६ ॥
कीर्तयेत्प्रातरुत्थाय कृष्णवश्यत्वसिद्धये । एकैकनामोच्चारणं वशीभवति केशवः ॥ १७ ॥

महाशिवरात्रिपर्वपर पाठ-पारायण एवं स्वाध्याय-हेतु प्रमुख प्रकाशन

संक्षिप्त शिवपुराण, सचित्र (मोटा टाइप) कोड 1468, विशिष्ट संस्करण, सजिल्द—इस पुराणमें परात्पर ब्रह्म श्रीशिवके कल्याणकारी स्वरूपका तात्त्विक विवेचन, रहस्य, महिमा और उपासनाका विस्तृत वर्णन है। इसमें भगवान् शिवके उपासकोंके लिये यह पुराण संग्रह एवं स्वाध्यायका विषय है। मूल्य ₹२८०, सामान्य संस्करण (कोड 789) मूल्य ₹२३०, गुजराती (कोड 1286) मूल्य ₹२२५, तेलुगु (कोड 975) मूल्य ₹२००, बँगला (कोड 1937) मूल्य ₹१६०, कन्नड़ (कोड 1926) मूल्य ₹२००, तमिल (कोड 2043) मूल्य ₹३००।

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
2020	शिवमहापुराण-मूलमात्रम्	२७५	1343	हर हर महादेव	२५	1627	रुद्राष्टाध्यायी-सानुवाद	३०
1985	लिङ्गमहापुराण-सटीक	२२०	1367	श्रीसत्यनारायणव्रतकथा	१५	2155	द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग	४०
1417	शिवस्तोत्ररत्नाकर-सानुवाद	३५	563	शिवमहिम्नःस्तोत्र	५	2127	शिव-आराधना— पॉकेट साइज (बेड़िआ)	७
1899	श्रावणमास-माहात्म्य	३५	228	शिवचालीसा-पॉकेट साइज	४	586	शिवोपासनाङ्क	१५०
1954	शिव-स्मरण	१०	1185	शिवचालीसा-लघु	२	635	शिवाङ्क	२००
1156	एकादश रुद्र (शिव)-चित्रकथा	५०	1599	श्रीशिवसहस्र...नामावलि...	१०			
0204	ॐ नमः शिवाय	२५	230	अमोघ शिवकवच	४			

चैत्र नवरात्रके अवसरपर नित्य पाठके लिये 'श्रीरामचरितमानस' के विभिन्न संस्करण (६ अप्रैल शनिवारसे नवरात्रारम्भ होगा)

कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मूल्य ₹
1389	श्रीरामचरितमानस—बृहदाकार (वि०सं०)	६५०	82	श्रीरामचरितमानस—मझला साइज, सटीक, [बँगला, गुजराती भी]	१३०
80	,, बृहदाकार-सटीक (सामान्य संस्करण)	५५०	1318	,, रोमन एवं अंग्रेजी-अनुवादसहित (मझला भी)	३००
1095	,, ग्रन्थाकार-सटीक (वि०सं०) गुजरातीमें भी	३३०	83	,, मूलपाठ, ग्रन्थाकार [गुजराती, ओड़िआ भी]	१३०
81	,, ग्रन्थाकार-सटीक, सचित्र, मोटा टाइप, [ओड़िआ, तेलुगु, मराठी, नेपाली, गुजराती, कन्नड़, अंग्रेजी भी]	२६०	84	,, मूल, मझला साइज [गुजराती भी]	८०
1402	,, सटीक, ग्रन्थाकार	२००	85	,, मूल, गुटका [गुजराती भी]	५०
2166	,, ग्रन्थाकार-सटीक (सामान्य संस्करण)	१५०	1544	,, मूल, गुटका (विशिष्ट संस्करण)	६०
1563	,, मझला, सटीक (विशिष्ट संस्करण)	१५०	2151	सचित्र रामरक्षास्तोत्रम्—पुस्तकाकार (बेड़िआ)	१५
1436	,, मूलपाठ, बृहदाकार	३००		सुन्दरकाण्ड सटीक, मूल पाठ कई आकार-प्रकारमें	

नित्य पाठके लिये 'श्रीदुर्गासप्तशती' के विभिन्न संस्करण

1567	श्रीदुर्गासप्तशती—मूल, मोटा टाइप (बेड़िआ)	५०	866	श्रीदुर्गासप्तशती—केवल हिन्दी	२२
876	,, मूल, गुटका	१५	1161	,, ,, मोटा टाइप, सजिल्द	५५
1346	,, सानुवाद, मोटा टाइप	४०	1774	देवीस्तोत्ररत्नाकर	४०
1281	,, सानुवाद (राजसंस्करण)	५५		श्रीदुर्गाचालीसा एवं विन्ध्येश्वरीचालीसा	
489	,, सजिल्द, गुजरातीमें भी	५०		कई आकार-प्रकारमें	
118	,, सानुवाद, सामान्य टाइप (गुजराती, बँगला, ओड़िआ भी)	३५			

कई दिनोंसे अनुपलब्ध ग्रंथ—अब उपलब्ध

शिवाङ्क [ग्रन्थाकार] (कोड 635)—यह विशेषाङ्क शिवतत्त्व तथा शिव-महिमापर विशद विवेचनसहित शिवचित्र, पूजन, व्रत एवं उपासनापर तात्त्विक और ज्ञानप्रद मार्गदर्शन कराता है। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गोंका सचित्र वर्णन उसके अन्यान्य महत्वपूर्ण (पठनीय) विषय है। मूल्य ₹२००

संतवाणी-अङ्क [ग्रन्थाकार] (कोड 667)—संत-महात्माओं और अध्यात्मचेता महापुरुषोंके लोककल्याणकारी उपदेश-उद्बोधनोंका यह बृहत् संग्रह प्रेरणाप्रद होनेसे नित्य पठनीय और सर्वथा संग्रहणीय है। मूल्य ₹२३०



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

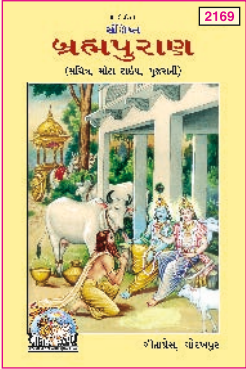
Made with

By
Avinash/Shashi

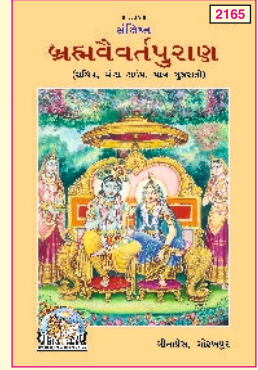
Icreator of
hinduism
server!

नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार

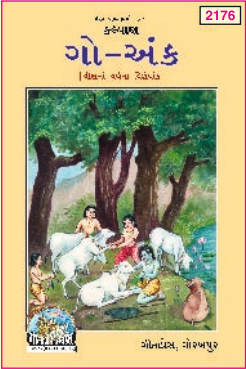
सं० ब्रह्मपुराण (कोड 2169) गुजराती—इस पुराणमें सृष्टिकी उत्पत्ति, पृथुका पावन चरित्र, सूर्य एवं चन्द्रवंशका वर्णन, श्रीकृष्णचरित्र, कल्पान्तजीवी मार्कण्डेय मुनिका चरित्र, तीर्थोंका माहात्म्य एवं अनेक भक्तिपरक आख्यानोंकी सुन्दर चर्चा की गयी है। मूल्य ₹१५०



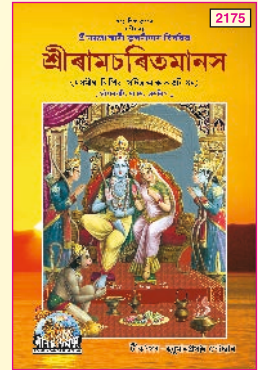
संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्तपुराण (कोड 2165) गुजराती—इस पुराणमें चार खण्ड हैं—ब्रह्मखण्ड, प्रकृतिखण्ड, श्रीकृष्णजन्मखण्ड और गणेशखण्ड। इसमें भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाओंका विस्तृत वर्णन, श्रीराधाकी गोलोक-लीला तथा अवतार-लीलाका सुन्दर विवेचन, विभिन्न देवताओंकी महिमा एवं एकरूपता और उनकी साधना-उपासनाका सुन्दर निरूपण किया गया है। मूल्य ₹२५०



गो-अङ्क (कोड 2176) गुजराती—इस विशेषाङ्कमें सुप्रसिद्ध संत-महात्माओं एवं विद्वानोंके द्वारा प्रस्तुत गायकी महत्ता एवं उपयोगितापर उत्कृष्ट लेखोंके साथ-साथ गायके आर्थिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्वका प्रतिपादन किया गया है। मूल्य ₹२००



श्रीरामचरितमानस [सटीक, ग्रन्थाकार] (कोड 2175) असमिया—श्रीरामचरितमानसका स्थान जगत्के साहित्यमें निराला है। जिस ग्रन्थका जगत्में इतना मान हो, उसका भिन्न-भिन्न भाषाओंमें छपना स्वाभाविक ही है। इसी क्रममें पाठकोंके अनवरत माँगपर श्रीरामचरितमानसका असमिया भाषामें प्रकाशन किया गया है। मूल्य ₹२६०



‘कल्याण’ के पाठकोंसे नम्र निवेदन

फरवरी माह सन् २०१९ ई० का अङ्क आपके समक्ष है। यह अङ्क उन सभी ग्राहकोंको भी भेजा गया है, जिनको सन् २०१९ ई० का विशेषाङ्क ‘श्रीराधामाधव-अङ्क’ वी०पी०पी० द्वारा भेजा गया है, लेकिन उसका भुगतान हमें प्राप्त नहीं हो पाया है। जिन ग्राहकोंकी वी०पी०पी० किसी कारणसे वापस हो गयी है, वे सदस्यता-शुल्क भेजकर रजिस्ट्रीसे पुनः मँगवा सकते हैं अथवा अनुरोध पत्र भेजकर वी०पी०पी० से भी पुनः मँगवा सकते हैं।

जिन ग्राहकोंको सदस्यता-शुल्क भेजनेके उपरान्त भी उनके रुपये यहाँ न पहुँचने अथवा उनके रुपयोंका यहाँ समायोजन आदि न हो सकनेके कारण वी०पी०पी०से अङ्क प्राप्त हो गया है, उनसे अनुरोध है कि वे किसी अन्य व्यक्तिको वह अङ्क देकर ग्राहक बना दें और उनका नाम, पूरा पता, मोबाइल नम्बर तथा अपनी ग्राहक-संख्या आदिका विवरण हमें भेज दें, जिससे उन्हें नियमित ग्राहक बनाकर भविष्यमें ‘कल्याण’ सीधे उनके पतेपर भेजा जा सके। यदि नया ग्राहक बनाना सम्भव न हो तो पूर्व जमा रकमकी वापसी या समायोजन हेतु e-mail : kalyan@gitapress.org / 09235400242/244 पर सम्पर्क करना चाहिये। इसके अतिरिक्त ‘कल्याण’ के विषयमें किसी भी जानकारीके लिये 9648916010 पर SMS एवं WhatsApp भी कर सकते हैं।

व्यवस्थापक—‘कल्याण-कार्यालय’, पत्रालय—गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५ (उ०प्र०)